केरल ज्योति

नवंबर 2025

ISSN 2320-9976
Reference Resource Journal

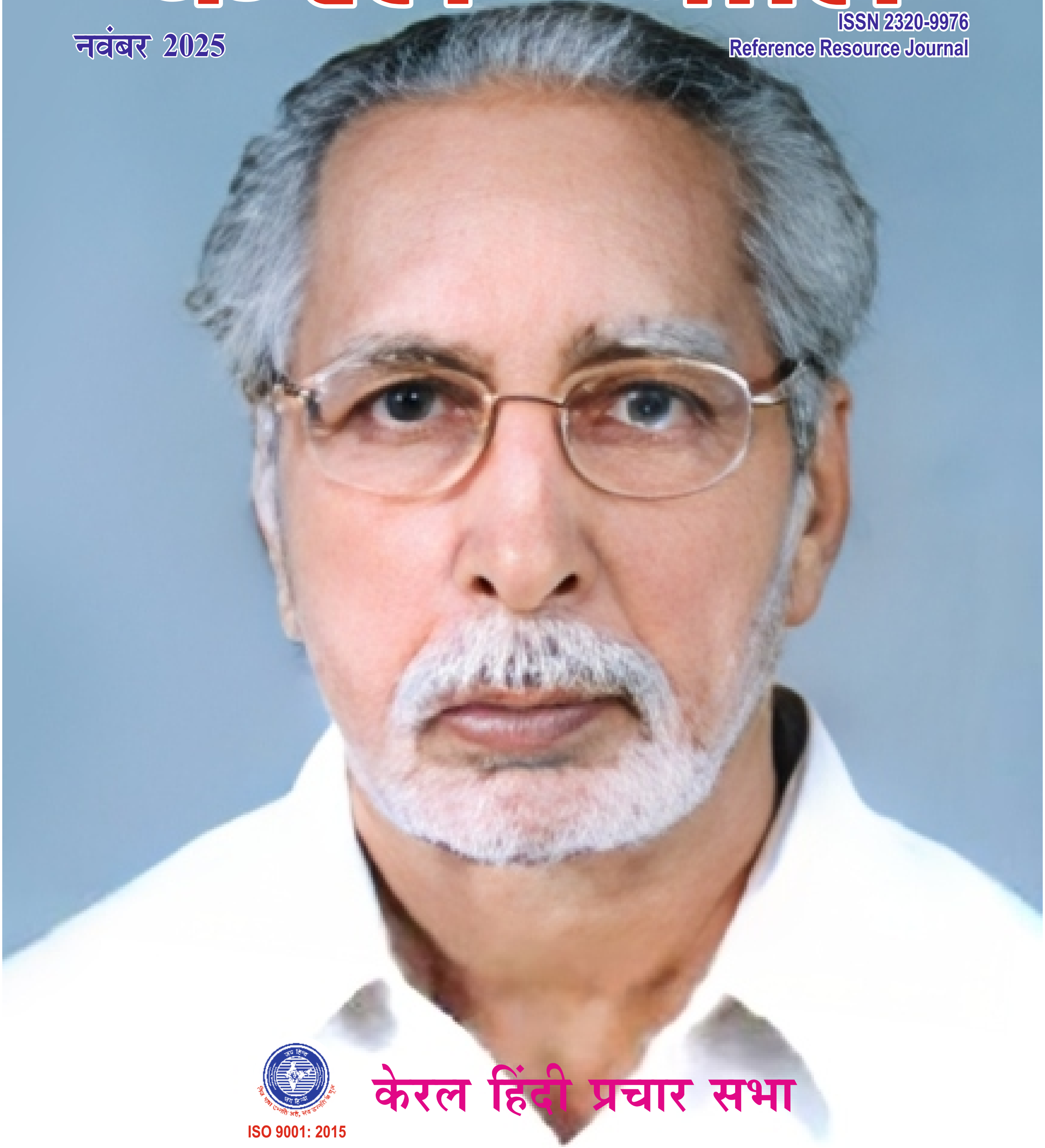

ISO 9001: 2015

केरल हिंदी प्रचार सभा

श्रीनारायणगुरु मुक्त विश्वविद्यालय के शिक्षार्थी सहायक केन्द्र (LSC) का उद्घाटन
प्रो.(डॉ) मोहन बी मेनोन दीप जलाकर कर रहे हैं।

प्रो (डॉ) मोहन बी मेनोन
उद्घाटन भाषण कर रहे हैं।

विश्वविद्यालय का रजिस्ट्रार डॉ.सुनिता ए पी मुख्य भाषण कर रही हैं।

केरलज्योति
केरल हिंदी प्रचार सभा
की मुख पत्रिका
(केंद्रीय हिंदी निदेशालय की
वित्तीय सहायता से प्रकाशित)

केरल हिंदी प्रचार सभा के संस्थापक
स्व. के वासुदेवन पिल्लै
पूर्व समीक्षा समिति
प्रो (डॉ) एन रवींद्रनाथ
डॉ के एम मालती
प्रो(डॉ) आर जयचन्द्रन
प्रो (डॉ) जयश्री एस आर
परामर्श मंडल
डॉ तंकमणि अम्मा एस
डॉ लता पी
डॉ रामचन्द्रन नायर जे
प्रबन्ध संपादक
गोपकुमार एस (अध्यक्ष)
मुख्य संपादक
डॉ. एम एस विनयचंद्रन
संपादक
डॉ. रंजीत रविशैलम
संपादकीय मंडल
अधिवक्ता मधु बी (मंत्री)
सदानन्दन जी
मुरलीधरन पी पी
प्रो रमणी वी एन
चन्द्रिका कुमारी एस
एल्सी सामुवल
आनन्द कुमार आर एल
प्रभन जे एस
डॉ नेलसन डी
प्रकाशन संयोजिका
अर्चना एस

सूचना : लेखकों द्वारा प्रकट किये गये मत उनके अपने हैं। उनसे संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।

पुष्प : 62 दल : 8 अंक: **नवंबर 2025**

अनुक्रमणिका

संपादकीय 5

आचार्यवर प्रो के के कृष्णन नंपूतिरि : हिंदी की आभा
अधिवक्ता (डॉ) बी मधु 6

राजा रविवर्माचरित महाकाव्य – **प्रो.डी.तंकप्पन नायर** 7

दर्शन माला (अनूदित व्याख्या) – **डॉ नेलसन डी** 9

21वीं सदी के प्रथम दो दशकों के हिंदी गीतकाव्य में सौंदर्य परक
जीवन-मूल्य – **डॉ कल्पना जैन** 11

समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरण-विमर्श : महिला कवियों का योगदान
शिवराजकुमार कल्लूर 14

प्रेमचंद के उपन्यास में निहित समस्याएँ – **दिलीपभाई जे वसावा** 17

आधुनिक मलयालम उपन्यासों में समाज और संस्कृति की झलक
डॉ सुमित पी वी 21

ड्रेन में रहनेवाली लड़कियाँ' में लड़कियों की आत्मा की आवाज़
डॉ ऐडा मानुवेल 24

शताब्दी में भी समकालीन 'रंग भूमि'–**सुबहाना एन** 26

मुस्लिम स्त्री की संवेदनाएँ : हिंदी कहानी में–**वैष्णवी बी** 29

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री जीवन संघर्ष–**डॉ सफीना एस ए** 33

उपन्यास 'अस्थि फूल' और 'अन्हियारे तलछट में चमका' में
स्त्री संघर्ष और सशक्तिकरण–**रीना कुमारी राय** 36

समकालीन कहानियों में पुरुष वर्चस्विता एवं स्त्रीः कुछ और आयाम
डॉ जोयिस टॉम 40

मानस कैलास – **मूलः मंजु वेल्लायणि**
अनुवाद : प्रो.डी.तंकप्पन नायर, डॉ.रंजीत रविशैलम 44

देवयानम् (आत्मकथा)
मूलः डॉ.वी.एस. शर्मा, अनुवादः प्रो. के.एन.ओमना 46

ज़िंदगीः एक लोलक (आत्मकथा)
मूलःश्रीकुमारन तंपी अनुवादः डॉ.पी.जे.शिवकुमार 48

प्रश्नोत्तरी–**डॉ.रंजीत रविशैलम** 50

मुखचित्र : स्वर्गीय प्रो के के कृष्णन नंपूतिरि

लेखकों से निवेदनः

• हिन्दी और इतर भारतीय भाषाएँ, साहित्य, संस्कृति आदि पर लिखी गयी उच्च स्तरीय मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ आमंत्रित हैं। • भाषा, साहित्य, संस्कृति आदि पर आयोजित समारोहों, चर्चाओं, संगोष्ठियों के समाचारों का भी स्वागत है। इन समाचारों को प्रस्तुत करनेवाले का नाम और पूरा पता भी लिख भेजें। • भारतीय भाषाओं से अनूदित कविता, कहानी भी भेजें। उनके साथ मूल लेखक से प्राप्त अधिकार पत्र भी प्रेषित करें। • प्राकाशनार्थ रचनाएँ साफ-साफ अक्षरों में लिखकर अथवा टंकित कर या **डी.टी.पी.** करके **सी.डी.** में भेजें। कृपया कार्बन प्रति न भेजें। • स्वीकृत रचनाएँ यथासमय पत्रिका में प्रकाशित की जाएँगी। • आप ई-मेल द्वारा भी अपनी रचनाएँ भेज सकते हैं। ई-मेल में Microsoft Word or Pagemaker फाइल में भेजिए। ई-मेल आईडी :khpsabha12@gmail.com • अपनी रचना के साथ पूरा पता (जिला, राज्य और पिनकोड सहित), लघु परिचय और फोटो भी भेजें।

संपादक, 'केरल ज्योति', केरल हिन्दी प्रचार सभा,
तिरुवनन्तपुरम-695 014

सभा का मुख्यालय और उसकी गतिविधियाँ

केरल की राजधानी तिरुवनंतपुरम के वषुतक्काड़ में सभा का मुख्यालय स्थित है। सभा के मुख्य परिसर में सभा के संस्थापक मंत्री की पावन स्मृति में श्री वासुदेवन पिल्लै स्मारक हिंदी ग्रंथालय, स्नातकोत्तर अध्ययन अनुसंधान केंद्र, साहित्याचार्य महाविद्यालय, केंद्रीय हिंदी महाविद्यालय, टंकण और आशुलिपि संस्थान, परीक्षा भवन, राष्ट्रवाणी मुद्रणालय, राष्ट्रज्योति पब्लिशेर्स के प्रकाशन अधिकारी का कार्यालय, हिंदी अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय (बी.एड़) और केरल विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त शोध केंद्र हैं।

विज्ञापन दर (साधारण अंक)

	मासिक	वार्षिक
आवरण पृष्ठ 4 (रंगीन)	रु.2500.00	25,000.00
आवरण पृष्ठ 2 एवं 3 (रंगीन)	रु.2000.00	20,000.00
साधारण पृष्ठ पूरा	रु.1000.00	10,000.00
साधारण पृष्ठ 1/2	रु.600.00	6,000.00
साधारण पृष्ठ 1/4	रु.350.00	3,500.00

एक प्रति का मूल्य रु. 40/-   आजीवन चंदा : रु. 4000/-   वार्षिक चंदा : रु. 400/-

A /c No. 57022786007 IFS Code : SBIN0070033
State Bank of India, Vazhuthacaud Branch

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा, वषुतक्काडु, तिरुवनन्तपुरम-695 014.
दूरभाष:0471-2321378, 2329200, 2329459. फैक्स:0471-2329200 ई-मेल : khpsabha12@gmail.com

दूरभाष : 0471-2321378, 2329200, 2329459
फैक्स : 0471-2329459
मोबाईल : संपादक : 7898515222/ 9447657301
khpsabha12@gmail.com
www.keralahindipracharsabha.in

केरलज्योति
सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
नवंबर 2025

संपादकीय

'मनुष्य को आज़ाद करनेवाला ज्ञान अर्जित करो' - महामंत्र की घोषणा से SGOU

शिक्षित होकर प्रगत होने के संदेश को लक्ष्य करते हुए महान संत एवं आधुनिक केरल के नवोत्थान नायकों में प्रमुख श्रीनारायण गुरु के नामधेय में कार्यरत मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा केरल हिंदी प्रचार सभा के छात्र अध्ययन सहायक केंद्र में इन्डेक्शन प्रोग्राम संपन्न हुआ। 19-10-2025 को एम के वेलायुधन नायर प्रेक्षागृह में आयोजित उक्त कार्यक्रम में अक्तूबर महीने से शुरू होनेवाले स्नातक (तीन व चार वर्षीय) एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के तहत शैक्षिक कार्य योजनाओं की प्रविष्टियों की भूमिका चर्चित हुई।

सन 2020 अक्तूबर दो को कोल्लम जिले के कुरीप्पुष़ा नामक जगह में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से मान्यता भी प्राप्त हुई है। भारत भर प्रतिष्ठित हिंदी संस्था केरल हिंदी प्रचार सभा और मुक्त विश्वविद्यालय के बीच औपचारिक गठबंधन संबंधी अकादमिक समझौता हाल ही में हस्ताक्षरित किया गया।

इन्डेक्शन प्रोग्राम का उद्घाटन श्री एस गोपकुमार (अध्यक्ष केरल हिंदी प्रचार सभा) की अध्यक्षता में NIOS के चेयरमान एवं मलेशिया के मुक्त विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रोफ मोहन मेनोन ने किया। अपने सुदीर्घ अनुभव के आधार पर प्रो मेनोन ने दूर-शिक्षण पाठ्य योजना की अनंत संभावनाओं पर विस्तार से भाषण दिया। SGOU के रजिस्ट्रार डॉ सुनीता ए पी ने मुख्य भाषण प्रस्तुत किया। शैक्षिक कक्षाएँ सफलता से कार्यान्वित किए जाने का मार्ग-निर्देश सहित अध्येताओं के व्यक्तित्व विकास हेतु शिक्षा, कला, संगीत, खेल-कूद, स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर सटीक बयान दिया गया। उन्होंने आशा प्रकट की कि उच्चशिक्षा को जनतांत्रिक ढाँचे में ढाल लेने पर ही वैज्ञानिक समूह-सृष्टि की संभावना बलवती हो जाएगी। आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक बंधन, नौकरी, योग्यता, आयू की सीमा, दिव्यांगता आदि कई कारणों से रुकी गई अपनी शिक्षा की पूर्ति के लिए मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त शैक्षिक सेवाएँ इच्छुक अध्येताओं को सहायक रहेंगी।

सभा के मंत्री अधिवक्ता डॉ बी मधु ने कहा कि केरल के शैक्षिक क्षेत्र में श्रीनारायणगुरु मुक्त विश्वविद्यालय के बीच केरल हिंदी प्रचार सभा का गठबंधन ऐतिहासिक महत्व का रहेगा। यह सहसंबंधित कार्यान्वयन समग्र शैक्षिक विकास-पथ पर निश्चय ही मील का पत्थर बनें।

भले ही, 'शिक्षित होकर स्वतंत्र' हो जाने की उद्घोषणा कामयाब हो जाए !

डॉ एम एस विनयचंद्रन
मुख्य संपादक

संस्मरण

आचार्यवर प्रो के के कृष्णन नंपूतिरि : हिंदी की आभा

अधिवक्ता (डॉ) बी मधु

विख्यात भाषाविद प्रो के के कृष्णन नंपूतिरि की केवल यादें ही रह गई हैं। आपने हिंदी, मलयालम, संस्कृत आदि भाषाओं में नए कीर्तिमान स्थापित किए। आचार्यवर 'विख्यात' होना नहीं चाहते थे। लेकिन माँ सरस्वती की असीम कृपा प्राप्त उनकी वाणी व मेधा में अनुकरणीय बनने की लकीर स्वयंभू थी। प्राध्यापक, वैयाकरण, आलोचक आदि रूपों में आपने वाङ्मय को खज़ाना प्रदान किया, जिसके नियमित पठन-पाठन से हर ज्ञानपिपासु व्यक्तित्व उन्नति के शिखर पर अनायास ही जा पहुँचता है। आपने लंबी आयु पाई थी।

आपका 'शिष्यत्व' प्राप्त करने का सौभाग्य भी मुझे प्राप्त है। गुरुवरों में अतिश्रेष्ठ हमेशा ही हमारे रग-रग में प्रदीप्त हैं। मैं यह बताना चाहता हूँ कि हिंदी के लिए आपकी विशिष्ट देन सुपुत्री प्रो (डॉ) श्रीलता जी ही हैं। आपने अपनी बेटी को हिंदी सेवा के लिए प्रेरित किया और 'गंगा शरण सिहं पुरस्कार' जैसे वरिष्ठ पुरस्कारों के योग्य भी बनाया। कराहती वृद्धावस्था में भी आप पठन-पाठन में व्यस्त रहे।

आपके कृतित्व के बारे में कहूँ तो आपने जीवनी, बाल कहानी, दर्शन आदि विधाओं में अपनी कलम चलाई। जीवनीकार के रूप में विख्यात गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजन पर दो पुस्तकें आपने रचीं - (1) गणित का जादूगर और (2) गणित के अद्भुत मनीषी श्रीनिवास रामानुजन। रामानुजन के व्यक्तित्व का समग्र अध्ययन उक्त ग्रंथों में प्रदृष्ट है। बालोपयोगी साहित्य रचने में आपकी रुचि अधिक थी। 'भविष्य' को मद्देनज़र रखते हुए ही आप लिखा करते थे। बच्चों में गुणों का भण्डार उपलब्ध कराने हेतु कालिदास के 'रघुवंश की कथाएँ' शीर्षक से एक ग्रंथ की रचना की।

'आत्मीयता' और आध्यात्मिकता आपके व्यक्तित्व के दो पहलुएँ थीं। अतः आप में दार्शनिकता का भाव आ जाना सहज ही था। 'ईशावास्योपनिषद' का संस्कृत भाषा से हिंदी अनुवाद उसका उदाहरण है। आपने संपादन कार्य भी किया है। 'जयशंकर प्रसाद साधना के विविध आयाम' आपके मशहूर संपादित ग्रंथ है। इसमें महाकवि जयशंकर प्रसाद पर 28 विद्वानों द्वारा प्रस्तुत आलेख संकलित है। लेकिन आपकी कीर्ति का महास्तंभ 'हिंदू धर्मस्वरूपम' है जो मलयालम भाषा में सृजित है। यह हिंदू धर्म पर केंद्रित एक अनूठा ग्रंथ है। हिंदुत्व एवं हिंदू धर्म की महानता एवं स्वीकार्यता हेतु आपके उक्त ग्रंथ प्रमाण है।

सदा ही केरल हिंदी प्रचार सभा के हितैषी रहे प्रोफसर जी ने यहाँ वतौर परीक्षा नियंत्रक के पद पर भा उत्कृष्ट सेवाएँ प्रदान की हैं। एतदर्थ आपके व्यक्तित्व की पराकाष्ठा को आपके शागिर्द आज भी स्मरण करते हैं। विख्यात यूनिवर्सिटी कॉलेज के हिंदी अध्यापक के रूप में जो चिरप्रतिष्ठा आपने पाई है उसकी तुलना संभव नहीं है। महामनीषी आचार्य विगत फरवरी माह में हमें छोड़कर स्वर्ग सिधार गए। उस बुलंद 'आत्मा' के आगे नतमस्तक होता हूँ।

मंत्री , केरल हिंदी प्रचार सभा

राजा रविवर्माचरित महाकाव्य

प्रो.डी.तंकप्पन नायर

चौथा सर्ग

व्यक्तित्व के विविध आयाम

1. देते थे उपदेश रविवर्मा अपने परिवार के सदस्यों को कि
तेज़ी से विकास हो रहे एक युग में न रहें कूपमंडूक होकर और
फोर्ट हाई स्कूल में पढ़नेवाले अपने भानजे को बताया था उन्होंने कि
उपेक्षा करना क्षत्रिय बालकों के लिए अलग रखे आसनों की ।

2. और अत्यन्त विनय से उनसे बोलनेवाले दूसरे भानजे को
बताया उन्होंने कि नहीं है इसकी आवश्यकता और
यह घटना परिचय देती है उनके रूढिवादी विरोधी
दृष्टिकोण का फिर भी उनमें था आशय संबन्धी सन्देह।

3. कहना ही पड़ेगा कि प्रगतिवादी रविवर्मा में था एक
रूढ़िवादी भी और जब यूरोप में जाने का निमंत्रण मिला
उन्हें तो उसका निराकरण नहीं था सिर्फ तिरुवितांकूर के
तत्कालीन राजा श्रीमूलम् तिरुनाळ की नाखुशी की आशंका से ।

4. रविवर्मा में भी था तत्कालीन प्रगतिवादी व्यक्तियों में
होनेवाला आशय संबंधी संदेह और इसीलिए निराकरण
किया समुद्री यात्रा का और इससे स्पष्ट होता है उनमें भी
थी उस समय के बुद्धिजीवियों में विद्यमान संदेही प्रकृति।

5. यह भी सच है कि रविवर्मा ने ही भारत में किया था
आरंभ चित्रकला का नवीन युग और वे नहीं थे सिर्फ
चित्रकार बल्कि वे थे भारत में उन्नीसवीं सदी में देशीय
बोध के उन्नायकों में से एक महान देशप्रेमी मनीषी भी।

6. रविवर्मा के कला जीवन में तब हुआ था निश्चयात्मक
मोड़ का आरंभ जब उन्होंने स्थापित किया था लिथोग्रैफिक प्रेस
और उनके सपने थे आम लोगों को प्रवेश पाने योग्य स्थायी गैलरी
और सामान्य लोग भी खरीद सकने योग्य चित्रों के प्रतिरूप।

7. भारत के बहुमत थे वंचित मंदिरों में जाने और मूर्तिपूजा
करने के अधिकार से और उनके लिए थे अप्राप्य तंजावूर
और राजस्थान के चित्र और रविवर्मा के लिथोग्रैफिक
प्रेस के चित्रों की प्रतियाँ खरीद सकते थे सामान्य लोग भी।

8. प्रमुख चित्र थे सरस्वती, महालक्ष्मी, पार्वती-परमेश्वर और
नवनीत कृष्ण के और सामान्य लोग भी खरीद सकते थे
इन चित्रों की प्रतियाँ और इन चित्रों ने वर्णव्यवस्था के अन्तर्गत
नहीं आनेवाले लोगों की देवता संकल्पना को प्रदान की स्पष्टता।

9. फलस्वरूप मंदिर में आराधना के अधिकार से
वंचित लोग भी मध्यस्थता के बिना ही पुरोहितों की
पाये ईश्वर की सन्निधि में और यों सांस्कृतिक संग्राम में
रविवर्मा के चित्र भाग लेने लगे निरन्तर रणधीरों की भाँति।

10. उनकी ख्याति बढायी प्रेस से निकले रंगीन चित्रों ने
किन्तु डाला विपरीत प्रभाव भी उनकी कला-
निपुणता पर और तृप्त कर सामान्य लोगों की रुचि को
समझौता करने लगे वे अपने कलासंबंधी दृष्टिकोण के साथ।

11. फलतः वे कम जागरूक होने लगे चित्रों की रचना में और
एट्टुमान्नूर के मंदिर के सोलह हाथों वाले नटराज के एक
चित्र को आठ हाथों वाले चित्र के रूप में वर्णन किया गलती से
और कोई आँच न आयी इस गलती से भी रविवर्मा की महानता में ।

12. इस बात में नहीं है रविवर्मा का वास्तविक महत्व कि उन्होंने
प्रस्तुति की गतकाल में भारतीय सिनेमाओं केलिए स्वीकार्य
वेशभूषा अथवा चित्रीकरण सिसकियों से भरे नाटकीय
संदर्भ का या प्रयोग करना पाश्चात्य शैली पृष्ठभूमि का।

13. भारत में चित्रकला का नवयुग आरंभ करनेवाले थे
रविवर्मा ही और वे मात्र एक चित्रकार नहीं थे बल्कि वे
थे उन्नीसवें शतक के देशीय बोध के शिल्पियों में से
एक और उनमें कूट-कूटकर भरी थी सच्ची राष्ट्रीयता।

14. रविवर्मा के संबन्ध में विख्यात कला समीक्षक रामानन्द के
मत में उन्होंने भारत से सिर्फ़ प्रेम ही नहीं किया अपितु बन
गये थे प्रेम का पात्र भी और तमिल महाकवि सुब्रह्मण्य भारती और
मलयालम महाकवि वल्लत्तोल पर उनका प्रभाव नहीं था यदृच्छया।

(क्रमशः)

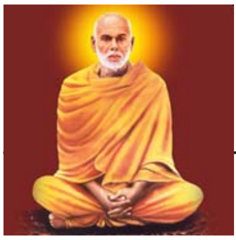

दर्शन माला

डॉ नेलसन डी

अध्यारोप दर्शन

(केरल के महान संत, ऋषि-कवि, समाज सुधारक श्रीनारायणगुरु द्वारा संस्कृत में रची गई वेदांत-संबंधी रचना है 'दर्शनमाला।' दस-दस श्लोकों के दस भाग इसमें समाहित हैं। मुनि नारायण प्रसाद की मलयालम-व्याख्या का हिंदी भाषांतरण डॉ नेलसन डी ने तैयार किया है।—संपादक)

(पूर्व प्रकाशित से आगे)

2

वासनामयमेवादावासीदिदमथ प्रभुः।
असृजन्मायया स्वस्य मायावीवाखिलं जगत्।।

आदौ - आदि में; इदम् - यह प्रपञ्च; वासनामयं एव - केवल वासनामय होकर; आसीत् - रहता था; अथ - बादमें; प्रभुः- प्रभु परमेश्वर; स्वस्य मायया - अपनी माया-शक्ति से; मायावी इव - जादूगर की तरह; अखिलम्- समस्त जगत् का; असृजत् - सर्जन किया।

आदि में यह प्रपंच केवल वासनामय होकर रहता था। बाद में प्रभु परमेश्वर ने अपनी माया से, जादूगर की तरह, समस्त जगत् की सर्जना की।

प्रत्यक्षानुभव होने से यह संसार जिस प्रकार दिखाई देता है, ठीक उसी प्रकार सत्य है। ऐसा है तो वह कैसे हुआ? यही इस अध्याय का मुख्य विचार-विषय है। दृश्य के पीछे उसके कारणभूत एक मौलिक सत्य है। उसे देख लेना ही आधुनिक भौतिकशास्त्र का मौलिक प्रश्न है। वही दर्शानशास्त्र का भी मुख्य विषय है।

भौतिकशास्त्र तरह-तरह की ऊर्जरेणुओं को समस्त का आधार देखता है। ऊर्ज होने से वह वस्तु नहीं है रेणु होते समय वस्तु होती है। अर्थात् पृथ्वी, पत्थर, लकड़ी आदि रूपांतर तो वस्तु या अवस्तु न कहने वाला और अदृश्य एक है। अदृश्य और अवस्तु कैसे दृश्य वस्तु बन सके। युक्ति सहज न होने पर भी आधुनिक शास्त्र को मानना पड़ता है कि वैसा होता है।

मतलब यह है कि अदृश्य और अवस्तु होकर ऊर्जा में समस्त वस्तुजाल बनने की संभावना ओझल रहती है।

ऊपर कहा गया है कि ऊर्जा समस्त का आधार सत्य होने पर भी, कोई नहीं जानता कि वह किस तरह का रूप लेकर आता है। जड़ वस्तु पत्थर में ऊर्जा होने वाला सत्य वही है। संसार के सकल यंत्र-सामग्रियों को रूपायित करने वाले लोहे में सत्य के रूप में वही रहता है। अमूल्य हीरों में और बदबू वाली कीचड़ में सत्य के रूप में वही है। मनुष्य शरीर के रूप में तथा उसके मस्तिष्क के रूप में भी वही है। उस मस्तिष्क की कार्यवाही मनुष्य की भावना में जन्म लेने वाले संसार की दृश्यलोक रूप में व्याप्ति देने में भी वही ऊर्जा है। मनुष्य के भावनालोक से दृश्यलोक तक के समस्त का और उसके संबंध में होनेवाले सारे ज्ञान का भी आधार एक ही ऊर्जा सत्य है। उस ऊर्जा सत्य में सबकी सृष्टि करने का अनंत साध्य है जिसे हम वासना कह सकते हैं।

दर्शनशास्त्र के आधार पर सत्य खोजने का परिश्रम करने वाले भी सर्वाधार एक की ही खोज करते हैं। उसको प्रथम श्लोक में परमेश्वर कहा गया है। यहाँ उसे प्रभव करनेवाले के अर्थ में प्रभु कहते हैं। परमेश्वर कहते हैं। परमेश्वर कहते समय तथा 'प्रभु' कहते समय भी उसमें मनुष्यत्व के आरोपण का लक्षण है। वह इस अध्याय के विचार के लिए सहज भी है। अन्वेषण का विषय यह है कि समस्त का स्रष्टा कौन है? भौतिकशास्त्रकार केवल ऊर्जा में अनन्य साध्यता देखता है। बात यह है कि दर्शशास्त्रज्ञ उसे प्रभु में देखता है। चाहे प्रभु हो या ऊर्जा हो, दोनों अप्रमेय हैं। मनुष्य की भावनाएँ अतीत हैं। जो सत्य का संकल्प नहीं कर सकेगा उसे सत्य का नाम जो भी दें, परंतु सत्य नहीं बदलता। खिलनेवाली सभी वासनाएँ उस सत्य में निहित हैं। इस प्रकार सूक्ष्म और अविज्ञेय एक तथ्य कैसे समस्त स्थूल और विज्ञेय होता है? भौतिक वैज्ञानिक इसका उत्तर नहीं देते। वह उनके अन्वेषण क्षेत्र के बाहर का विषय मानकर टालते हैं। आधुनिक शास्त्र शाखाओं को ऐसे एक पूर्वाग्रह ने ग्रसित किया है कि अद्‍भुत वाले सब, शास्त्र-विचार की परिधि के बाहर हैं। लेकिन दर्शशास्त्र का ऐसा पूर्वाग्रह-विचार नहीं है; खासकर वेदांत का। सत्य के संबंध में वेदांत की कोई व्यक्त धारणा नहीं है। उसका लक्ष्य यह है कि सत्य एक महाद्‍भुत मानकर अपने को उस महाद्‍भुत का ही भाग देखना है और स्वस्थ जीवन बिताकर उन्मुक्तता का अनुभव करना भी है। अतः अद्‍वैतपरता वेदांत का अस्वीकार्य विषय नहीं है। यही नहीं, पूर्ण रूप से सहमत है कि सत्य एक महाद्‍भुत है। उससे मानसिक, भौतिक, आंतरिक, बाह्य, चित्त तथा जड़ आदि से विभाजित यह संसार कैसे हुआ? कुल मिलाकर वेदांत का एक ही उत्तर है माया।

माया क्या है? इसका विवरण यहाँ नहीं दे सकते। तीसरे और चौथे अध्यायों में इसके बारे में विशद रूप से पढ़ना पड़ेगा। यहाँ कहती हुई माया तो जादूगर के मायाजाल के सदृश है। वह मायाजाल कैसे होता है? वह दर्शक नहीं जानता, किंतु जादूगर जानता है। उसी प्रकार हम दर्शक नहीं जानते कि प्रभु का मायाजाल कैसे होता है; प्रभु जानते हैं। हम दर्शक हैं और हमारा अविवेक है अज्ञान! वास्तव में दर्शकरूपी हम केवल प्रभु के मायाजाल का भाग हैं। फिर हम कैसे उस माया का रहस्य जान सकेंगे।

मायां तु प्रकृतिं विद्धि मायिनं तु महेश्वरम्।
माया को तो प्रकृति जाने। मायावी के रूप में महेश्वर को भी।

इस प्रकार श्वेताश्वतरोपनिशत् 4.10 द्‍वारा जो दर्शन है वही यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

(क्रमशः)

केरल हिन्दी प्रचार सभा में संचालित स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा एवं पत्रकारिता परीक्षा में (2025) प्रथम, द्वितीय और तृतीय रैंक प्राप्त तीनों को हार्दिक बधाइयाँ

नाथा शाहजहान
Reg. No.34
निर्मला कॉलेज, मूवाट्टुपुष़ा

श्वेता सजु
Reg. No.54
निर्मला कॉलेज, मूवाट्टुपुष़ा

वैशाखी के.पी.
Reg. No.49
सरकारी वनिता कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम

21वीं सदी के प्रथम दो दशकों के हिंदी गीतकाव्य में सौंदर्य परक जीवन-मूल्य

डॉ कल्पना जैन

सारांशः 21वीं सदी का आगमन एक नई वैचारिक सोच के साथ हुआ है। आज विज्ञान, तकनीकी सूचना एवं जनसंचार के साधनों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रांति उत्पन्न कर दी है। परिवर्तित परिस्थितियों में, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, परंपरागत जीवन-मूल्यों का स्थान आधुनिक उपभोक्तावादी संस्कृति से परिचालित नव-मूल्य लेते जा रहे हैं। आज के भौतिकतावादी आधुनिक युग में जीवन उपयोगी मानवीय जीवन-मूल्यों का निरंतर ह्रास होता जा रहा है। मानव और मानवीय जीवन-मूल्य सर्वोपरि है। समाज में जीवन-मूल्यों की यथास्थिति से अवगत कराने में गीतकार अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गीतकार एक सामाजिक प्राणी होने के नाते समाज से प्राप्त अपनी अनुभूतियों को गीतों के माध्यम से सहजता से अभिव्यक्त कर देता है। 21वीं सदी के गीतकारों के गीतकाव्य में सौंदर्य परक जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति प्रचुर मात्रा में हुई है। 21 वीं सदी के गीतकारों ने युगानुरूप बदल रहे सौंदर्य बोध को पहचाना और परिवर्तनशील तथा काल सापेक्ष सौंदर्यात्मक मूल्यों की अभिव्यक्ति गीतों के माध्यम से की है। भाव सौंदर्य परक जीवन-मूल्य हो या प्रकृति सौंदर्य परक जीवन-मूल्य, वस्तु सौंदर्य परक जीवन-मूल्य हो या मानव सौंदर्य परक जीवन-मूल्य हो सभी की अभिव्यक्ति अपने गीतों के माध्यम से करने में 21वीं सदी का गीतकार सफल रहा है। आज आवश्यकता है प्रकृति के संरक्षण की और मानवीय सौंदर्य परक जीवन-मूल्यों में आए ह्रास से उत्कृष्ट जीवन-मूल्यों के संरक्षण की, जिससे मानव हृदय अवसाद, घुटन, कुंठा की ओर अग्रसर न हो और समाज सौंदर्य से परिपूर्ण हो ताकि स्वस्थ समाज की स्थापना हो सके।

संकेत शब्दः गीतकाव्य, सौंदर्य, जीवन-मूल्य।

प्रस्तावना- 21वीं सदी का आगमन एक नई वैचारिक सोच के साथ हुआ है। आज विज्ञान, तकनीकी सूचना एवं जनसंचार के साधनों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रांति उत्पन्न कर दी है। भारतीय राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक धरातल आदि पर अनेक परिवर्तन हुए हैं। परिवर्तित परिस्थितियों में, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, परंपरागत जीवन-मूल्यों का स्थान आधुनिक उपभोक्तावादी संस्कृति से परिचालन नव-मूल्य लेते जा रहे हैं। आज के भौतिकतावादी आधुनिक युग में जीवन उपयोगी मानवीय जीवन-मूल्यों का निरंतर हास होता जा रहा है।

मानव और मानवीय जीवन-मूल्य सर्वोपरि है। जीवन मूल्यों से तात्पर्य मूलतः जीवन के मापदंडों से ही होता है। जीवन-मूल्य मानव समाज की सभ्यता एवं संस्कृति के परिचालक तत्व हैं। किसी भी समाज की उन्नति जीवन-मूल्यों पर ही आधारित होती है।

"जे आर फ्रैंकन के अनुसार, मूल्य आचार, आदर्श, सौंदर्य, कुशलता व महत्व के वे मापदंड हैं, जिनके साथ लोग जीते हैं, जिनका समर्थन करते हैं तथा जिन्हें वे कायम रखते हैं।"[1]

समाज में जीवन-मूल्यों की यथास्थिति से अवगत कराने में गीतकार अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गीतकार एक सामाजिक प्राणी होने के नाते समाज से प्राप्त अपनी अनुभूतियों को गीतों के माध्यम से सहजता से अभिव्यक्त कर देता है। 21वीं सदी के गीतकारों के गीतकाव्य में सौंदर्य परक जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति प्रचुर मात्रा में हुई है। सौंदर्य एक भाववाचक संज्ञा है। इस संज्ञा का मनसा, वाचा, कर्मणा बोध प्राप्त कर लेना ही सौंदर्य बोध है। 21 वीं सदी के गीतकारों ने युगानुरूप बदल रहे 'सौंदर्य बोध' को पहचाना और परिवर्तनशील तथा काल सापेक्ष सौंदर्यात्मक मूल्यों की अभिव्यक्ति गीतों के

माध्यम से की है। भाव सौंदर्य परक जीवन-मूल्य हो या प्रकृति सौंदर्य परक जीवन-मूल्य, वस्तु सौंदर्य परक जीवन-मूल्य हो या मानव सौंदर्य परक जीवन-मूल्य हो सभी की अभिव्यक्ति अपने गीतों के माध्यम से करने में 21वीं सदी का गीतकार सफल रहा है।

वस्तुवादी अथवा वस्तुनिष्ठ सौंदर्य के समर्थकों की अवधारणा है कि सौंदर्य, वस्तुगत सत्ता एवं पदार्थ में निहित रहता है, जिसमें यथार्थ की प्रधानता रहती है। सौंदर्य वस्तु का गुण है और वह उस वस्तु की पराकाष्ठा में सन्निहित रहता है।

आनंद तिवारी ने गीत 'मन है भारी-भारी' में 'पगड़ी', 'लकड़ी', 'फटी फतोही' आदि वस्तुओं के माध्यम से किसी गरीब मानव के मौजूदा हालात, उसकी स्थिति की स्पष्ट अभिव्यक्ति की है, जो समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता की मौजूदगी की भी द्योतक है। वस्तुओं के माध्यम से गूढ़ अर्थ की अभिव्यक्ति करता 'मन है भारी-भारी' गीत की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं- "सिर पर पगड़ी / हाथ में लकड़ी,/मन है भारी-भारी। /चिन्ता के सागर में डूबीं /उम्मीदें सारी।/फटी फतोही /मैल में चिकटी, /यही बात बस मन में खटकी। /आज का भोजन मिलेगा कैसे,/ आशायें आकाश में लटकी।"[2]

गीत में वस्तुओं के प्रयोग से गीतकार केवल गीत के सौंदर्य में ही वृद्धि नहीं करता है बल्कि पाठक या श्रोता को समाज में व्याप्त मूल्यों की यथास्थिति, यथार्थ सत्य से भी अवगत कराता रहता है।

भाववादी, सौंदर्य को मानव के संवेग, भावना और इच्छा (काम) से जोड़कर उसे ऐन्द्रिय मानसिक अनुभूति मानते हैं। सौंदर्य, मानव की भावनाओं पर निर्भर रहता है जिसके अनुसार सौंदर्य मन की वस्तु है, दृष्टा की सृष्टि है। गीतो में मर्मस्पर्शी चित्रण में भाव सौंदर्य निहित रहता है। प्रेम, क्रोध, करुणा, उत्साह आदि का विभिन्न परिस्थितियों में मर्मस्पर्शी चित्रण भाव सौंदर्य उत्पन्न करके गीत सौंदर्य में वृद्धि करता है। प्रकृति की मनोरम छटा भी विरहन के विरह की तीव्रता को और अधिक बढ़ा देती है। इस विरही भाव की आदित्य प्रचण्डिया ने 'बाहर अनुगूँज मुखर होती' गीत में प्रभावी अभिव्यक्ति की है। इस गीत की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं -"अंबर में दल बादल छाए/मन-मयूर बेहद हर्षाए/बेध रहीं तूफानी बूँदें, विलख - विलखकर विरहिन रोती।/भीतर भावों की मधुर गूँज, बाहर अनुगूँज मुखर होती।"[3]

मानव सौंदर्य के अंतर्गत पुरुष, नारी और बालक के सौंदर्य का वर्णन निहित होता है। प्रायः मानव के बाह्य सौंदर्य को गीतों में रचा जाता रहा है, लेकिन 21वीं सदी के गीतकारों ने मानव के बाह्य सौंदर्य के स्थान पर मानव के आंतरिक गुणों को गीतों में अधिक स्थान दिया है।

रविशंकर मिश्र के गीत 'नम्बर सौ में फुल' में शिक्षित नारी के घर और घर के बाहर दोनों में कुशल होने को गीत में बड़े ही सुंदर ढंग से ढाला गया है। प्रायः यह माना जाता रहा है कि ज्यादा पढ़ी-लिखी नारी घर के कार्यों में दक्ष नहीं होती, परंतु आज की सशक्त नारी घर हो या बाहर सभी के कार्य अपनी सूझबूझ और कुशलता के साथ पूर्ण कर लेती है। गीत 'नम्बर सौ में फूल' की पंक्तियों में गीतकार के सशक्त नारी के भाव प्रकट होते हैंः- सुन्दर है, सुशील तो है ही/मीठी कितनी बोली /पढ़ी-लिखी, गृहकार्य दक्ष है /पर मन की है भोली नयी बहू को मिलना ही है /नम्बर सौ में फुल।"[4]

21वीं सदी के गीतकारों ने प्रकृति के पारंपरिक आलम्बन, उद्दीपन आदि रूपों के अतिरिक्त मानवीकरण रूप में भी प्रकृति सौंदर्य की छटा को बिखेरा है। अविनाश ब्यौहार के गीत 'छियालीस' में प्रकृति के मानवीकरण रूप का सुंदर बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। गीत का कुछ अंश दृष्टव्य है- "हँस हँस कर/झूमती बदलियाँ/आँगन का तन/लगी भिगोने !/चुहल करे हरियाली/गद गद हैं खेत !/ रसभरी लगती है/मरूस्थल की रेत ! !/नदिया की देह/हुईं दोहरी /झरनों के मुख /हुये सलोने !"[5]

इस उद्धरण में बादलों का हँस-हँसकर झूमना,

आँगन के तन को भिगोने, चुहल करना हरियाली का और खेत का गदगद हो प्रतिक्रिया देना, नदिया की देह का दोहरी होना और झरनों के मुख सलोने होना आदि क्रियाओं में मानवीय क्रियाएँ निहित हैं। अतः प्रकृति के द्वारा मानवीय क्रियाएँ किए जाने का सुंदर वर्णन गीत के प्रकृति सौंदर्य में अत्यंत वृद्धि कर देता है।

मनोज जैन 'मधुर' के गीत 'पर्यावरण धरोहर' वृक्ष संरक्षण के लिए प्रेरित करता गीत है। गीत का कुछ अंश प्रस्तुत है- "हरा भरा सोना है जंगल/इसे न हरगिज काटें /काँक्रीट का जाल बिछाकर /नहीं धरा को पाटें / ये तो शिव का वह स्वरूप जो/हरते सदा अमंगल /स्वच्छ हवा औ' वर्षा का जल/देते हमको जंगल /करते जो खिलवाड़ प्रकृति से /उनको सबक सिखाएँ/नदियों, ताल, नहर, बाँधों को/मिलकर स्वच्छ बनाना/जल है प्राणाधार हमारा /मिलकर इसे बचाना/रहे प्रदूषण मुक्तधरा यह /और गगन यह अपना /रोग रहित जीवन जीने का/टूट न जाए सपना /पर्यावरण बचा लेने का /बीड़ा चलो उठाएँ"[6]

इस उद्धरण में गीतकार ने प्रकृति के द्वारा मानव को सदैव संरक्षण और मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति के माध्यम के रूप में प्रस्तुत कर प्रकृति के महत्व को दर्शाते हुए, प्रकृति को मानव के द्वारा संरक्षण प्रदान करने की अनुशंसा की है। आज का गीतकार केवल प्रकृति सौंदर्य को गीत में व्यक्त ही नहीं करता वरन् वह प्रकृति सौंदर्य को संरक्षित और सुरक्षित करने की भी अनुशंसा करता है।

निष्कर्ष : 21वीं सदी के गीतकारों में आधुनिक समाज की विचारधारा व्याप्त होने के कारण उन्होंने समाज से जुड़े तथ्यों और सौन्दर्यो को गीतों में ढाला है उन्होंने वस्तु के सौंदर्य को गीत में परिस्थिति को स्पष्ट करते हुए व्यक्त किया है। प्रकृति के विद्रूप होते स्वरूप के साथ प्रकृति संरक्षण की सीख भी समाज को गीतों द्वारा दी गई है। प्रकृति सौंदर्य जो मानव हृदय को आनंदित कर उसे अवसाद से उभारने की क्षमता रखता है। उसका सुंदर प्रस्तुतीकरण गीतों में प्रस्तुत किया गया है। गीतों के भाव हृदय को भावविभोर कर कुछ क्षणों के लिए रस की निष्पत्ति करने में सफल सिद्ध होते हैं। 21वीं सदी का गीतकार मानव के बाह्य सौंदर्य के साथ-साथ मानव के आंतरिक सौंदर्य को भी प्रकट करने में विश्वास रखता है। बदलते समाज में मानव के दोहरे व्यक्तित्त्व के कारण उसके व्यक्तित्त्व में आये परिवर्तन के कारण उसके आन्तरिक गुणों का उद्घाटन अत्यंत आवश्यक हो गया है। आज आवश्यकता है प्रकृति के संरक्षण की और मानवीय सौंदर्य परक जीवन-मूल्यों में आए ह्रास से उत्कृष्ट जीवन-मूल्य के संरक्षण की, जिससे मानव हृदय अवसाद, घुटन, कुंठा की ओर अग्रसर न हो और समाज सौंदर्य से परिपूर्ण हो ताकि स्वस्थ समाज की स्थापना हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार : पूनम मदान और रामशक्ल पांडे, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, प्रथम संस्करण, सन् 2015-16 ई, पृष्ठ 367
2. दिन बड़े कसाले के : आनंद तिवारी, उद्भावना प्रकाशन, गाजियाबाद, प्रथम संस्करण, सन् 2011 ई, पृष्ठ 26
3. कितने रूप कितने रंग : आदित्य प्रचण्डिया, हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण, सन् 2020 ई. पृष्ठ 27
4. संदर्भो से कटकर : रविशंकर मिश्र 'रवि', बोधि प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण, सन् 2018 ई, पृष्ठ 43
5. मौसम अंगार है : अविनाश ब्यौहार, काव्या प्रकाशन, भोपाल, प्रथम संस्करण, सन् 2019 ई, पृष्ठ 58
6. एक बूँद हम : मनोज जैन मधुर , पहले पहल प्रकाशन, भोपाल, प्रथम संस्करण, सन् 2012 ई, पृष्ठ 108-109
7. भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोशः सं पंडित रामचंद्र पाठक, भार्गव बुक डिपो, वाराणसी, संस्करण सन् 1995 ई.

असिस्टेंट प्रोफेसर, एच आई एम टी,
ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश ।
ईमेलः kalpanajainindia@gmail.com

समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरण-विमर्श : महिला कवियों का योगदान

शिवराजकुमार कल्लूर

शोध सार : प्रकृति और मानव का अटूट संबंध भारतीय संस्कृति में आदिकाल से रहा है। हिंदी साहित्य में भी प्रकृति का चित्रण आदिकाल से मिलता है, विशेषकर छायावादी युग में प्रकृति के रहस्य और सौंदर्य का अनुभव कविताओं में अभिव्यक्त हुआ है। समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरण संबंधी नई रचनाओं का सृजन हो रहा है और अंग्रेजी साहित्य के इको-क्रिटिसिज्म के अनुरूप हिंदी आलोचना में भी पर्यावरण-विमर्श शुरू हो गया है।

महिला हिंदी काव्य लेखन परंपरा में 'स्त्री' केंद्रबिंदु होते हुए भी समकालीन महिला कवियों ने बदलते परिवेश पर कविताएँ लिखकर पर्यावरण के प्रति अपनी संवेदनशीलता प्रकट की है। नीलेश रघुवंशी, इंदु जैन, अनामिका, ओमलता, डा. रश्मि चतुर्वेदी, नीशा कुलश्रेष्ठ, इंदु सिन्हा, मीनाक्षी पंत, ऋद्धा शेखर 'मधु', 'शकुन विजय', संध्या शर्मा, पुष्पा मेहर, रश्मि शर्मा, रश्मि प्रभा, कात्यायनी, अंजना दयाल आदि प्रमुख समकालीन महिला कवयित्रियाँ हैं जिन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से बदलते पर्यावरण के विविध आयामों को सफलतापूर्वक समझाया है।

यह शोध सार समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरण-विमर्श में महिला कवियों के योगदान पर केंद्रित है। यह दर्शाता है कि किस प्रकार महिला कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से पर्यावरण के प्रति अपनी चिंता और संवेदनशीलता को व्यक्तकिया है और पर्यावरण से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर प्रकाश डाला है।

बीज शब्द : समकाल, हिन्दी कविता, पर्यावरण-विमर्श, महिला कवि

मूल आलेख : प्रकृति के बिना हम अपने जीवन की परिकल्पना भी नहीं कर सकते हैं क्योंकि मानव सहित सभी जीव-जंतु प्रकृति पर अवलंबित है। प्रकृति में निरंतर विकासशील और परिवर्तनशीलता की अद्भुत शक्तिविध्यमान है अतः भारतीय भव्य परंपरा में प्रकृति को 'प्रकृति मात' के स्वरूप में आदर करते हैं। मानव और प्रकृति के बीच में ऐसा अटूट संबंध है जो मानव को उनके बुध्दि से भी अधिक संवेदनशील बना देता है।

प्रकृति के प्रति प्रेम प्रत्येक मानव और साहित्यकार के हृदय में किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है, ठीक वैसे ही जैसे किसान अपनी मिट्टी से प्रेम करता है। यही कारण है कि विश्व की हर भाषा और साहित्य में प्रकृति का समावेश मिलता है। भारतीय साहित्य में प्रकृति को 'सत्यम् शिवम् सुंदरम' की संज्ञा दी गई है, जबकि पाश्चात्य साहित्य में इसे 'काव्य की प्रकृति अनुकृति' माना गया है। हिंदी कविता में प्रकृति का चित्रण आदिकाल से लेकर आधुनिक युग तक व्यापक रूप से मिलता है। विशेष रूप से, छायावादी युग की कविताओं में प्रकृति के रहस्यात्मक और सौंदर्यानुभूति पक्ष को प्रमुखता से व्यक्त किया गया है।

नई सदी के साहित्य में पर्यावरण से संबंधित रचनाओं की सृजनशीलता बढ़ी है। साथ ही, अंग्रेजी साहित्य के इको-क्रिटिसिज्म (Eco-Criticism) के प्रभाव स्वरूप हिंदी आलोचना में भी बदलते पर्यावरण की विविध आयामों पर विमर्श प्रारंभ हुआ है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक हिंदी काव्य लेखन में 'स्त्री' भले ही केंद्र में रही हो, फिर भी समकालीन कवयित्रियों ने बदलते पर्यावरण को अपनी कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त कर अपनी संवेदनशीलता प्रकट की है।

वन-विनाश के दुष्प्रभाव और वन संरक्षण की आवश्यकता को लेकर कविताओं में जागरूकता उत्पन्न करने का प्रयास किया गया है। औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण मनुष्य बड़े पैमाने पर पेड़ों की कटाई कर वनों का विनाश कर रहा है, जिससे वायुमंडल में हानिकारक गैसों, विशेषकर कार्बन डाइ ऑक्साइड की मात्रा बढ़ रही है। हिंदी साहित्य ज्ञानकोश के अनुसार, संयुक्त राष्ट्र के 'फ्लड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन' की एक रिपोर्ट में बताया गया है कि प्रतिवर्ष लगभग 18 लाख एकड़ भूमि

पर स्थित वन नष्ट हो जाते हैं। अंधाधुंध वन कटाई के कारण ग्रीन हाउस गैसों की वृद्धि हो रही है, जो वैश्विक जलवायु परिवर्तन का एक प्रमुख कारण बन रही है।

इस गंभीर स्थिति को लेकर कवयित्री मीनाक्षी पंत अपनी कविताओं में वन-विनाश के विरोध में मुखर होकर अपनी आवाज़ उठाती हैं- 'धूप रोक फिर छाया देकर फर्ज निभा फिर झड़ा पेड़।।/खेतों में पानी लाने को बादल से जाकर लड़ा पेड़।/फल खाए जिसने उसने ही काटा / जान शर्म धरती में गड़ा पेड़।/ख्वाईश इंसा की पूरी कर अब कटा जमी पर पड़ा पेड'[1] - (पेड़)

कवयित्री शकुन 'विजय' मिटते हुए वृक्षों की परंपरा को लेकर अपनी गहरी चिंता व्यक्त करती हैं।

'नींद में सोये मानव जाग/ वृक्ष कितने कट रहे... वृक्ष को ढूंढ़ता फिरेगा /उन कटी लकडियों के ढेर में अपने को घिरा पायेगा हरदम / एकाकीपन के घेर में/धरती से उखड़े वृक्षों को फिर से रोपने में असमर्थ होगा / खोई परम्परा स्थापित करने में।/आगे का समय भी व्यर्थ होगा / जिस परम्परा का वृक्ष उगाने / पुर्वजों ने जतन से बीज बोया/ फिर पाने को लालायित होगा / जो अपने ही हाथों से खोया।'[2] (वृक्ष और परम्परा)

इन्दु सिन्हा की 'पर्यावरण रक्षा' और 'कहाँ है मेरा गाँव' कविताओं में, पुष्पा मेहरा की 'यादों में' कविता में, तथा रश्मि शर्मा की 'वो गली बहुत याद आती है' कविता में बदलते हुए ग्रामीण परिवेश और कृषक जीवन की तस्वीर प्रस्तुत की गई है। इसी प्रकार, इन्दु जैन की कविता 'पूरा जीवन' में वृक्ष, धरती और वर्षा के अटूट संबंध को उजागर किया गया है। कवयित्री इस बात पर जोर देती हैं कि वृक्षों की घटती संख्या का कारण वर्षा की कमी है, जिससे धरती और उससे जुड़े पेड़-पौधे सूखते जा रहे हैं। ऋद्मा शेखर 'मधु' अपनी कविता 'मत संहार करो वृक्षों का' के माध्यम से वृक्षों के संरक्षण का संदेश देती हैं।

पर्यावरण प्रदूषण के दुष्प्रभावों पर ध्यान देते हुए यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक जीवन, विज्ञान-प्रौद्योगिकी और शहरीकरण पर्यावरण के विभिन्न तत्वों को क्षति पहुँचा रहे हैं। जल, वायु, ध्वनि, भूमि और विद्युत चुंबकीय विकिरण प्रदूषण जैसे कारकों के कारण प्राकृतिक संतुलन प्रभावित हो रहा है। विषैली धूल के बढ़ते स्तर से ओज़ोन परत क्षीण होती जा रही है। इसी प्रकार के प्राकृतिक असंतुलन पर कवयित्री डॉ. रश्मि चतुर्वेदी अपनी रचनाओं में विचार व्यक्त करती हैं। 'फाड़ दो ये नीला आकाश / अपने वाहनों के ज्वर से। मुझे नहीं चाहिए कोई परत /जो मुझे तपने से रोके / गरम रेत की तरह / सागर में हुए विस्फोट की तरह/तुम काट सकते हो तो काट डालो / मेरे आंगन के पेड़ों को घोसले कहीं और बना लेंगे पक्षी/तुमने हमेशा किया है। चिंकार का शिकार / इस हरियाली को बेजार / लेकिन मैंफिर भी रही/ओस सी चुपचाप / तुम कर सकते हो ताज को भी काला / लेकिन मुझे नहीं चाहिए/कोई सौगात इस पूर्णिमा में तुमने कई बार चोट की है। मेरी पहचान पर/ लेकिन तुम नहीं मिटा सके/ मेरे आंसुओं को.....'[3] (परत)

कवयित्री शकुन 'विजय' मिटते हुए वृक्षों की परंपरा की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए हिरोशिमा और नागासाकी पर हुए परमाणु हमलों का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। वे मानव द्वारा निर्मित परमाणु शस्त्रों (अणु बम) के उपयोग, ओज़ोन परत के विनाश और युद्धों के कारण पृथ्वी, वायुमंडल, जल तथा समग्र जीव जगत पर पड़ने वाले विनाशकारी प्रभावों को स्पष्ट करती हैं।

वैश्विक तापवृद्धि (ग्लोबल वार्मिंग) पर हिंदी साहित्य ज्ञानकोश में उल्लेख है कि 'ग्रीनहाउस गैसों के प्रभाव से पृथ्वी की सतह के औसत तापमान में वृद्धि को वैश्विक तापवृद्धि कहा जाता है। पृथ्वी की सतह से लगभग 6 मील की ऊँचाई तक का वातावरण जलवायु निर्माण में सहायक होता है। इस दायरे में बनने वाली विभिन्न गैसों में ग्रीनहाउस गैसें जलवायु परिवर्तन और वैश्विक तापमान वृद्धि के लिए अधिक जिम्मेदार मानी जाती हैं। इनमें प्रमुख रूप से मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन और कार्बन डाइऑक्साइड शामिल हैं। विशेष रूप से, कार्बन डाइ ऑक्साइड की अधिक मात्रा और वनों की कटाई वैश्विक तापवृद्धि के प्रमुख कारणों में से एक हैं।'

प्रसिद्ध कवयित्री अनामिका अपनी कविता के माध्यम से ग्लोबल वार्मिंग की समस्या को रेखांकित करते हुए वन-विनाश को रोकने और बढ़ती उष्णता को नियंत्रित करने की सलाह देती हैं। 'आज जब धरती का माथा गरम

है,/जल स्रोतों की पट्टी पूरी नहीं पड़ती,/निष्पत्र पेड़ हो गए हैं/थर्मामीटर'[4] (थर्मामीटर)

कवयित्री शकुन 'विजय' वृक्षों के निरंतर समाप्त होते जाने की समस्या को उजागर करते हुए हिरोशिमा-नागासाकी पर हुए परमाणु हमले का उदाहरण देती हैं। वे यह समझाने का प्रयास करती हैं कि मानव द्वारा निर्मित परमाणु हथियारों (अणु बम) के प्रयोग, ओजोन परत के क्षरण तथा युद्धों के कारण धरती, वायुमंडल, जल एवं संपूर्ण जीव-जगत पर गंभीर दुष्प्रभाव पड़ रहे हैं।

भू-भाग के जल संचयन में कमी, प्रकृति में असंतुलन, सुनामी, ज्वालामुखी विस्फोट, अकाल, भूकंप तथा ऋतु परिवर्तन जैसी समस्याओं का कारण पर्यावरण की असुरक्षा है।

बढ़ते शहरीकरण के कारण सीमेंट (कंक्रीट) और डामर की सड़कें व इमारतें तेजी से बन रही हैं, जिससे वर्षा का जल धरती में समाहित नहीं हो पा रहा है और भूजल की कमी बढ़ती जा रही है। दूसरी ओर, वनस्पतियों की कटाई से हरियाली कम हो रही है। पहले वृक्ष अपनी जड़ों के माध्यम से जल को संरक्षित रखते थे, किंतु अब इमारतों के निर्माण के कारण वनों का विनाश हो चुका है, जिससे भूजल स्तर में गिरावट आई है।

कवयित्री नीलेश रघुवंशी अपनी रचनाओं में भूजल की कमी और उसके संरक्षण का संदेश देती हैं। अनामिका भी अपनी कविताओं में ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभावों को रेखांकित करते हुए वनों के संरक्षण की सलाह देती हैं, ताकि वन-विनाश के कारण बढ़ते तापमान को नियंत्रित किया जा सके।

'इमारत के ऊपर इमारत / खाई के नीचे खाई/ दूर-दूर तक फैला कांक्रीट का जंगल / आएगा एक दिन ऐसा आएगा/जब हमें हमारी जमीन मिलेगी वापस / सीमेंट की टंकी में पानी पीती चिड़िया से/कहा पीपल की फूटती जड़ ने'[5] (जंगल और जड़)

आज के समय में मानव न केवल वनों का विनाश कर रहा है, बल्कि मिट्टी में मौजूद सूक्ष्म जीव-जंतुओं और पशु-पक्षियों के लिए भी विनाशकारी सिद्ध हो रहा है। इस कारण, पशु-पक्षी भयावह वातावरण में जीवन जीने के लिए विवश हैं। 'वन्य पशुम / डरते हैं। आग से/डरते हैं वे । हमारी निर्भीक आँखों से/जो झाँकती हैं / सीधे / उनकी आँखों में।'[6] (उनका भय)

कवयित्री कात्यायनी अपनी कविता में व्यक्त करती हैं कि मानव ने वनों को काटकर पशु-पक्षियों को बेघर कर दिया है और उनके जीने के अधिकार को छीन लिया है। वहीं, कवयित्री अंजना दयाल अपनी रचनाओं के माध्यम से हमें यह संदेश देती हैं कि सभी जीवों के प्रति दया भाव रखना चाहिए और पशु-पक्षियों का संरक्षण करना हमारा कर्तव्य है। 'पेड़-पौधों, चिड़िया और जानवरों पर दया रखना/अपने हिस्से की प्रकृति का संरक्षण करना होगा तुम्हें।'[7]

- (बेटू, चलते रहना होगा तुम्हें)

निष्कर्ष: समकालीन कवयित्रियों की इन कविताओं का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि वे पर्यावरण के प्रति अत्यंत जागरूक हैं। वे वनों के विनाश, उसके दुष्प्रभाव और संरक्षण की आवश्यकता को प्रमुखता से उजागर कर रही हैं। उनकी कविताएँ हमें बदलते पर्यावरण के प्रति सतर्क रहने और इस विषय पर गंभीरता से विचार करने का संदेश देती हैं। अतः हमें पर्यावरण संरक्षण की दिशा में ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

संदर्भ व सहायक ग्रंथ सूची

1. सं. अंजु (अनु) चौधरी, रंजू भाटिया, मुकेश कुमार सिन्हा - पगडंडियाँ, पृ. सं. 143
2. शकुन 'विजय' - बन्द गुलाब की पंखुडियाँ, प्.सं. 23
3. डॉ. रश्मि चतुर्वेदी - भ्रूण की आवाज, प्. सं. 128
4. अनामिका - टोकरी में दिगन्त, पृ. सं. 17
5. नीलेश रघुवंशी - अंतिम पंक्ति में पृ. सं. 56
6. कत्यायनी - जादू नहीं कविता, पृ. सं. 175
7. अंजना दयाल - पापा के जूते, पृ. सं. 47
9. हिन्दी साहित्य ज्ञानकोश

शोधार्थी , हिंदी अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग
कर्नाटक राज्य मुक्तविश्वविद्यालय
मैसुरु, कर्नाटक - 570006
Email : sbkallur8@gmail.com

प्रेमचंद के उपन्यास में निहित समस्याएँ

दिलीपभाई जे वसावा

साहित्य समाज का दर्पण है और साहित्यकार एक ऐसा प्रकाश पुंज है, जो भ्रान्ति- तिमिर को चीरकर स्पष्ट दिशा का निर्देश करता है। इस शताब्दी के आरम्भ में हिन्दी साहित्य को एक ऐसा साहित्यकार मिला जिसने शोषित और पीड़ितों के अन्तर में कुलबुलाती भावनाओं को वाणी दी तथा अपने साहित्य के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों और शोषण के विरूद्ध एक ऐसा आन्दोलन छेड़ा जो आज भी हमारे समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है, वह साहित्यकार थे, कथा-सम्राट प्रेमचन्द ।

मुंशी प्रेमचन्द का साहित्य आज भी उतना ही सामयिक, प्रासंगिक तथा सटीक है, जितना उनके जीवन-काल में था, बल्कि ऐसा लगता है, वह आज भी हमारी राष्ट्रीय समस्याओं का एक सच्चा दर्पण है।

प्रेमचन्द की लेखनी को ही यह श्रेय प्राप्त है कि हिन्दी साहित्य में पहली बार वे किसान-नायक बने, जो दिन-रात खेतों में खून-पसीना एक करके और बर्फीली रातों में दाँत किटकिटाते हुए आँधी-पानी से जूझने के बावजूद अपनी फसल लाश की तरह सूदखोरों के हाथों उठते देखकर मन मसोस कर रह जाते हैं।

प्रेमचन्द जी ने अपनी कलम से समाज के एक-एक विषय को लिखने का प्रयास किया है। प्रेमचन्द जी ने सब शोषित-पीड़ितों का ऐसा चित्रण अपनी सशक्त लेखनी से किया है कि पाठक के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उसमें शत-शत सच्चाई झाँकती है। पाठक को दर्द की पीड़ा की सच्ची एवं साक्षात् अनुभूति होती है। प्रेमचन्द जी ने ग्रामीण वातावरण और मानवीय स्वभाव का इतनी सूक्ष्मता से यथार्थ चित्रण किया है कि घटनाएँ चाहें काल्पनिक हों, परन्तु बिल्कुल यथार्थ ही लगती हैं। वास्तव में प्रेमचन्द जी दीन-दुःखियों के प्रबल हिमायती और हमारे लोक जीवन के सशक्त चितेरे रहे हैं। धार्मिक और सामाजिक ढकोसलों का जिस प्रकार उन्होंने भण्डा फोड़ दिया दिया, वह उनके उस समय की समस्याओं का साहस दिखाता है।

उन्होंने सदियों से सामाजिक विषमता से पीड़ित भूमिहीन मजदूरों की हिमायत में बहुत कुछ लिखा है। तत्कालीन किसान एवं मजदूरों की समस्याओं को भी उभारा है। कहीं - कहीं 'मंत्र जैसी कहानी के द्वारा अछूत वृद्ध द्वारा तत्कालीन हिन्दुओं के पाखण्ड का पर्दाफाश किया है। साम्प्रदायिक दंगों की समस्या की बात 'कायाकल्प' के द्वारा बताते हैं।

अपनी रचनाओं में विधवा-विवाह का केवल समर्थन ही नहीं किया, बल्कि एक विधवा से विवाह करके समाज के सामने एक आदर्श भी प्रस्तुत किया। वेश्यावृत्ति की समस्या 'सेवासदन' उपन्यास में कथाकार उभारते हैं। दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, शोषक एवं शोषित की व्यथा, किसानों की व्यथा, बेरोजगारी की, मध्यमवर्गीय परिवार की, भिक्षावृत्ति, आर्थिक शोषण, सामाजिक असमानता, अस्पृश्यता आदि अनेक समस्याओं की अभिव्यक्ति अपनी रचनाओं में की गयी हैं।

वे जानते थे कि गरीबी क्या होती है, दुःख क्या होता

है, संघर्ष क्या होता है, अनुभव की आँख ने उनके कथा-साहित्य को सच्चाई एवं प्रखरता प्रदान की है। वे सामाजिक संघर्ष के योद्धा थे, इसीलिए मध्यमवर्ग और निम्नवर्ग की समस्त पीड़ाओं में उभरती उनकी मानवीय ज्योति के दर्शन होते हैं। अपनी यथार्थवादी दृष्टि से वे समस्याओं के असली स्वरूप को पहचान लेते थे, उनके समाधान में वे आदर्शवदी हो उठते थे, यह दूसरी बात थी।

अब क्रमशः एक-एक उपन्यास को समस्या की दृष्टि से और मूल्यांकन की दृष्टि से देखते।

सेवासदन : (1916) की समस्या मध्यमवर्ग सम्बन्धित है। इसमें वेश्या जीवन को एक सामाजिक सन्दर्भ में देखा गया है। वेश्या पुरुष के लिए एक लुभावनी चीज रही है, परन्तु यथार्थवादी कलाकार ने उस लुभावनी चीज के नीचे छिपी नारी-जीवन की गहनतम पीड़ा, अवमानना को उद्घाटित कर मूल कारणों पर प्रकाश डाला है। जो हमारे मध्यमवर्गीय स्त्री-समाज को वेश्या बनने के लिए विवश कर देते हैं। लेखक ने हमारे पुरुष-समाज के रंग-बिरंगी नकाब पहने हुए तमाम धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक पुण्य- पुरुषों को भरी सड़क पर नंगा कर दिया है।

प्रेमाश्रम : (1921) तत्कालीन समाज के दूसरे सत्य को लेकर चला है। यह सच है कि किसानों का जीवन, किसानों और जमीदारों के आपसी सम्बन्धों ने किसानों के जीवन में अनेक प्रकार की समस्याएँ पैदा कर दी थीं। सच पूछिए तो इन सारी समस्याओं के मूल में भी आर्थिक विषमता ही रही थी। जमींदारी प्रथा ने भूमि का ऐसा असंतुलित विभाजन कर दिया था कि किसी के पास हजारों बीधा खेत हैं और कोई खेतहीन है। इन विषमताओं के कारण ही समाज में एक दीवार खड़ी होती है। इस उपन्यास में जमीदारों के अत्याचारों के साथ पुलिस वालों का जुल्म, रक्षा के नाम पर तैनात अफसरों और उनके अधीनस्थ कर्मचारियों के अन्धेर आदि का चित्रण मिलता है। अतः यह उपन्यास भी समस्या से घिरा हुआ है।

रंगभूमि : (1925) राष्ट्रीय उपन्यास है। इसमें विराट मंच पर एक ही बहुआयामी परिस्थितियों और चेतना को उपस्थित किया गया है। राष्ट्रीय स्तर पर तत्कालीन भारत की अनेक राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक समस्याएँ थीं। 'रंगभूमि' में वे सारी समस्याएँ प्रेमचन्द ने उठाई हैं। 'रंगभूमि' के केन्द्र में पांडेपुर गाँव है। इस गाँव के माध्यम से मुख्य समस्या उभरती है- औद्योगीकरण की। गाँव का केन्द्रवर्ती पात्र सूरदास है, जो स्वभावतः पूरे उपन्यास का नायक बन गया है। ज्ञानसेवक अपने कारखाने के सिलसिले में उस गाँव को खाली कराकर हथियाना चाहता है और सूरदास इसका विरोध करता है। यही केन्द्रबिन्दु पूरे उपन्यास में संघर्ष बनकर छा जाता है और अन्य राष्ट्रीय समस्याएँ इससे जुड़कर एक बहुआयामी यथार्थ की सृष्टि करती है। पूँजीवाद सारे सम्बन्धों को पैसे के सन्दर्भ में ही देखता है।

ज्ञानसेवक सूरदास की जमीन लेने के लिए अपना तर्क रखता है 'यहाँ एक कारखाना खोलूँगा, जिससे देश और राजनीतिक की उन्नति होगी, गरीबों का उपकार होगा, हजारों आदमियों को रोटियाँ मिलेंगी। इसका भी यश तुम्हीं को होगा।' अतः इस बड़ी समस्या को लेकर उपन्यास रचा है।

निर्मला : (1927) में दहेज और अनमेल विवाह की समस्या उठाई है। अर्थाभाव से निर्मला की शादी बूढ़े से कर दी जाती है। हमारे समाज का यह एक जाना-पहचाना परिदृश्य है। यह घटना कितनों की जिन्दगी बरबाद करती है। आर्थिक विषमता, सामाजिक विषमता की जड़ है। वह

सम्बन्धों और मूल्यों को भी तोड़ती है। बाप, बेटे के प्रति ईषालु हो जाता हैं, चोरी करने लगते हैं। कितनी ही सपनों भरी जिन्दगियाँ तबाह हो जाती हैं। प्रेमबन्द ने उस सामाजिक समस्या के बीच निर्मला को उपस्थित कर उसकी मानसिकता का अच्छा उद्घाटन किया है, साथ ही तोताराम के माध्यम से मध्यमवर्गीय व्यक्ति की विसंगतियों का, उसका कथनी और करनी के बीच के फासले का, उसकी उपाहास्पद नकली ताकतों का भी उद्घाटन किया है।

गबन : (1930) मध्यमवर्गीय जीवन के यथार्थ को व्यक्त करनेवाला सशक्त उपन्यास है। मध्यमवर्गीय जीवन की विसंगतियाँ और मनोवैज्ञानिक सत्य का बड़ा ही तीखा बोध उसके द्वारा व्यक्त हुआ है। रमानाथ मध्यमवर्गीय युवकों का प्रतिनिधि है। मध्यमवर्ग के युवक की रंगीन आकांक्षाओं का उसकी आर्थिक कमजोरियों और व्यक्तिगत असमर्थताओं के साथ भीर्षण संघर्ष दिखाया गया है। कहा जा सकता है कि 'गबन' मनोवैज्ञानिक छवि से भरपूर उपन्यास है। रमानाथ जैसे सामान्य पात्र को लेकर अन्तर्द्वन्द्व का जो मार्मिक अंकन प्रेमचन्द 'गबन' में कर सके हैं, वह उनके अन्य उपन्यासों में उपलब्ध नहीं होता। अंतर्द्वंद्व सामान्य पात्र में ही अधिक होता है। रमानाथ मध्यमवर्गीय युवक की समस्त सामाजिक और मानसिक स्थितियों का प्रतिनिधि होने के नाते संकल्प- विकल्प का युग है। उसका व्यक्तित्व कमजोर किन्तु सजीव है। मध्यमवर्गीय युवक समाज में अपनी झूठी प्रतिष्ठा कायम करने के लिए बाहर तो अभिनय करता ही है, अपने घर में भी अभिनय करता है। वह प्रेम को भी उसके मूल में नहीं पकड़ता, प्रेम को हृदय व्यापार न मानकर चमक-दमक का व्यापार मानता है। इसीलिए रमानाथ अपनी पत्नी के सामने अपने वास्तविक रूप को खोलता नहीं। समझता है कि उसके प्रति जालपा का प्रेम उसके रुपये-पैसे, शान-शौकत से जुड़ा है। वह डरता है कि सही वास्तविकता खुल जाने पर जालपा का प्रेम उसके लिए कम हो जाएगा। इसलिए वह सच्चाई का सहारा न लेकर रंगीन फरेब रचता है और वह स्वयं धीरे-धीरे उसमें उलझता जाता है। इसमें राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं का स्थान-स्थान पर अच्छा उद्घाटन हुआ है। प्रेमचन्द मूलतः सामाजिक समस्याओं के उपन्यासकार हैं और 'गबन' भी इसका अपवाद नहीं है। किन्तु मूल सौन्दर्य उसके मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की शक्ति में है।

कर्मभूमि : (1932) उपन्यास भी बहुआयामी है। इसमें राजनीतिक चेतना के मूल स्वर गूँथ दिए गए हैं। अमरकान्त एक समाज सेवक है। वह समाज-सेवा के उपरी रूप से होता हुआ बुनियादी रूप तक पहुँच जाता है। वह जाने-अजाने चमारों के गाँव में पहुँच जाता है और वह जैसे पहचान जाता है कि सेवा के प्रथम हकदार वे ही हैं और सेवा का अर्थ केवल सामाजिक भेदभाव दूर करना नहीं है, बल्कि उन्हें आर्थिक शोषण से मुक्ति दिलाना है। और यही सेवा राजनीतिक रूप ले लेती है और सत्ता से टकराती है। वह गाँव एक महन्त साहब की ज़मींदारी में आता है। महन्त साहब (जो धर्म के भी रक्षक माने जाते हैं) बहुत बड़े शोषक हैं और उनके शोषण को संरक्षण मिलत है सरकार से। प्रेमचन्द गाँधीजी की तरह अहिंसावादी आन्दोलन के समर्थक। इस राजनीतिक आन्दोलन के साथ-साथ अमरकान्त के अपने शहर में उसकी पत्नी सुखदा, डॉ. शान्तिकुमार आदि के नेतृत्व में अछूतोद्धार का सामाजिक आन्दोलन चलता है। वह आन्दोलन सामाजिक व्यवस्था से तो लड़ता ही है अन्ततोगत्वा सरकारी ताकत से भी टकराता है और उसमें भाग लेने वाले लोग गिरफतार होकर उसी जेल में आते हैं

जिसमें अमरकान्त भी है। कहीं न कहीं सभी समस्याओं के केन्द्रबिन्दु में है अर्थ की समस्या, जिसकी पहचान हुए बिना कोई समाज-संरचना को ठीक से पहचानने का दावा नहीं कर सकता ।

गोदान : (1936) प्रेमचन्द जी का ही नहीं, हिन्दी का श्रेष्ठ यथार्थवादी उपन्यास है। 'गोदान' की कथा का केन्द्र है होरी नामक किसान का जीवन। होरी अपने समय के गुण, दोष, अभाव और शक्ति के साथ भारत का सच्चा किसान है। उसकी एक छोटी सी आकांक्षा है कि उसके यहाँ एक गाय आए। वह भोला के यहाँ से गाय प्राप्त करता है किन्तु अपनी आकांक्षा के बदले भोला की एक दूसरी आकांक्षा पूर्ति के मूल्य पर। वह अधेड़ भोला की शादी कराने का वादा करता है। इस गाय का मूल्य है एक जीवित स्त्री- गाय की कुरबानी । गाय को देखकर पूरे गाँव के हृदय में ईर्ष्या का भाव आ जाता है। होरी का सबसे छोटा भाई हीरा चुपके से गाय को जहर दे देता है। जहर देता है कौन, अभिशाप झेलता है कौन? गाय की संदिग्ध मृत्यु की सूचना पाकर थानेदार आता है। झिंगुरीसिंह होरी को समझाते हैं कि, इसे कुछ दे दिलाकर मामला टाल। और झिंगुरी होरी को झट से तीस रुपऐ दे देते हैं। किन्तु धनिया आकर सारा खेल बिगाड़ देती है।

गाँव की शोषक शक्त्यिों के मन में एक नई गाँठ बंध जाती है। सभी बदला लेने को सोचते हैं। अतः उपन्यास के अन्ततोगत्वा होरी की व्यथा, पूरा संघर्षमय जीवन-गाथा से कई बातें उभरती हैं। किसान देश और समाज में अर्थ-उत्पादन का मूल साधन है। किसान को घेरने वाली शक्त्यिाँ है जमींदार, अफसर, पटवारी गाँव का साहूकार, पुरोहित, पुलिस और विडम्बना यह है कि ये सारी शक्त्यिाँ किसान के साथ अपना आर्थिक सम्बन्ध भी रखती हैं। प्रेमचन्द ने भारतीय किसान को बहुत विश्वस्त रूप से उभारा है किन्तु यह किसान कोई रूप स्वरूप प्राप्त या ठहरा हुआ किसान नहीं है बल्कि यह नए युग-सन्दर्भ में बदल रहा है। उस बदलाव, उस संक्रान्ति की पहचान भी गोदान में बहुत गहराई से व्यंजित हुई है। होरी अपने जीवन के अंतिम दिनों में किसानी छोड़कर मजदूर बन जाता है। होरी का बेटा गोबर गाँव छोड़कर शहर जाता है कमाने के लिए। वह भी मजदूर बनकर रह जाता है। विस्थापित किसान मजदूर के रूप में उपस्थित हो रहा है-किसान की यह नई पीढ़ी मजदूर के रूप में उपस्थित हो रही है किसान की यह नई पीढ़ी मजदूर होकर अधिक निश्चिन्त, निर्भीक, समझदार, उम्र और धर्म के आंतक से मुक्त होती जा रही है। वह आर्थिक सम्बन्धों को अधिक सफाई से समझ रही है। इसे धरम-करम की चासनी में नहीं पिधला सकते। इसलिए वह अपने अधिकारों को अधिक समझा रखता है तथा शोषकों के शोषण को दया-सहायता के रूप में न लेकर शोषण के रूप में ही लेता है।

अतः उपरोक्त रूप से प्रेमचन्द के सभी उपन्यासों के केन्द्र में समस्या तो है ही, प्रेमचन्द ने अपने सभी उपन्यासों में किसी न किसी समस्या को दृष्टिगत किया है। आज उन पर और उनके साहित्य पर विश्व के उस विशाल जन समूह को गर्व है, जो साम्राज्यवाद, पूँजीवाद और सामंतवाद के साथ संघर्ष में जुटा है- आज भी बहुत सारी समस्याओं के हल प्रेमचन्द के साहित्य में से मिल सकते हैं। जमीन से जुड़े प्रेमचन्द और उनका साहित्य कालजयी है, यह हम निश्चित रूप से कह सकते हैं।

संदर्भ सूचि

1. प्रेमचन्द गोदान,
2. प्रेमचन्द निर्मला
3. प्रेमचन्द गवन

असिस्टन्ट प्रोफेसर, ऐम.बी.पटेल कॉलेज ओफ एज्युकेशन,
सरदार पटेल युनिवर्सिटी, वल्लभ विद्यानगर
e-mail : dilipvasava4meet@gmail.com

आधुनिक मलयालम उपन्यासों में समाज और संस्कृति की झलक

डॉ सुमित पी वी

पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से मलयालम साहित्य क्षेत्र पर जो भी परिवर्तन हुए हैं उन्हें आधुनिक कहना समीचीन लगता है। आधुनिक मलयालम साहित्यिक परिदृश्य पर ध्यान देंगे तो उपनिवेशवादी शिक्षा प्रणालियों के कारण वैज्ञानिक-प्रौद्योगिकी विषय के साथ संबंध, गद्य रचनाओं की प्रधानता, कोश तथा व्याकरण ग्रंथों के निर्माण इत्यादि की भूमिका का स्पष्ट पता चल जाएगा। आधुनिकता के दौर में संस्कृति और साहित्य अभिजात वर्ग के हाथ में थे। उत्तर-आधुनिकतावाद ने सामाजिक जीवन में व्यक्ति, समाज, इतिहास, भूमि, राष्ट्र आदि सभी चीजों को कई स्तरों से तोड़ने का काम किया है। अन्य साहित्यिक विधाओं के विपरीत उत्तर आधुनिकतावाद के समय उपन्यास साहित्य अपना स्थान मजबूत करता रहा है।

साहित्य के आधुनिक रूप पर विचार करने पर उपन्यास नवीनतम विधा है। उपन्यास नवीनतम तो है, लेकिन इसका प्रचलन बहुत पुराना है। कथा-साहित्य के अनेक रूप प्राचीनकाल से ही मौखिक व लिखित रूप में प्रचलित थे। शास्त्रीय दृष्टि से देखें तो उपन्यास को हम गद्य काव्य के अंतर्गत मान सकते हैं। प्रेमचंद ने भी उपन्यास की विषय विविधता को उसकी प्रधानता का प्रमुख कारण बताया। प्रेमचंद ने लिखा है- "अगर आप को इतिहास से प्रेम है, तो आप अपने उपन्यास में गहरे से गहरे ऐतिहासिक तत्वों का निरूपण कर सकते हैं। अगर आपको दर्शन से रुचि है, तो आप उपन्यास में महान दार्शनिक तत्वों का विचार कर सकते हैं। अगर आप में कवित्व शक्ति है तो उपन्यास में उसके लिए भी काफी गुंजाइश है। समाज, नीति, विज्ञान, पुरातत्व आदि सभी विषयों के लिए उपन्यास में स्थान है।"[1]

आधुनिकता बोध को, जीवन दृष्टि के रूप में तथा जीवन मूल्य के रूप में हम परिभाषित कर सकते हैं। आधुनिकता बोध का एक पक्ष बिल्कुल आत्मपरक और आत्मकेंद्रित होने पर दूसरा पक्ष समाजोन्मुखी और प्रगतिशील होता है। आधुनिकता ने मनुष्य को एक तार्किक, संतुलित एवं स्वतंत्र दृष्टि प्रदान की है क्योंकि इसके बिना किसी भी क्षेत्र में विकास संभव नहीं है। डॉ. जगदीश गुप्त मानवतावादी जीवन दृष्टि को आधुनिकता की प्रेरक शक्ति मानते हैं। वे कहते हैं "आधुनिकता अपने सही अर्थ में विवेकपूर्ण दृष्टिकोण से उपजी है, जो व्यक्ति को वास्तविक युगबोध कराने के साथ-साथ अधिक दायित्वशील, सक्रिय और मानवीय बनाता है।"[2]

विश्वासाघात, मृत्युबोध, स्वयं में लीन रहने की शैली, जिन्दगी एक तरह का बदला है वाली सोच, व्यर्थता का एहसास आदि को आधुनिकता के महत्वपूर्ण लक्षण के रूप में लेखकों ने दिखाया। लेकिन, समाज ने यह आरोप लगाया कि जीवन की गंदी नालियों में ये लोग वसंत की सृष्टि कर रहे हैं। गौरतलब है कि, युवा पाठकों में एक तरह की नयी स्फूर्ति और उत्तेजना लाने में ये आधुनिक लेखक सक्षम साबित हुए। लगभग 12 साल तक अपनी प्रतिभा के साथ इन आधुनिक लेखकों ने मलयालम साहित्य क्षेत्र को संवर्धित किया। 80 के जमाने तक पहुँचते ये लेखक बिल्कुल प्रभाव हीन साबित हुए। फिर भी मलयालम साहित्य क्षेत्र के विकास में उनका योगदान बिल्कुल महत्वपूर्ण है। उन्होंने नवीन साहित्य बोध की कामना करते हुए एक नया सौंदर्यात्मक रास्ता खोल दिया। मलयालम साहित्य के इतिहास में अत्यधिक महत्वपूर्ण मोड को रेखांकित करने वाला समय भी यही है। "आधुनिक युग का एक और पहलू मानव सभ्यता के विकास के नजरिए से बहुत महत्वपूर्ण है। मानव सभ्यता के ज्ञात इतिहास में पहली बार इतने बड़े पैमाने पर लोगों का आपस में मिलना-जुलना हो रहा है। इसका प्रभाव कई रूपों में सामने आया, मसलन मानव सभ्यता का विकास किस तरह से हुआ है, साहित्य की वास्तविक प्राणधारा क्या है, विश्व साहित्य का आधार क्या होगा और मानव सभ्यता के विकास में अपने-अपने देश/सभ्यता/संस्कृति का क्या योगदान रहा है, यह योगदान ही

उस सभ्यता को जांचने की कसौटी होगी। किसी भी सभ्यता समीक्षक या साहित्यकार के लिए इन प्रश्नों से टकराना अनिवार्य था, उनके लिए स्वाभाविक भी।"[3]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के दस वर्ष तक उपन्यासकारों की मायूसी का समय था। उनकी रचनाओं में एक नयी दृष्टि, अंदरूनी शैली, दुख-अवसाद दिखाई दे रहा था। इसकी शुरुआत एम.टी. वासुदेवन नायर के उपन्यास नालुकेट्ट (1958) से हुई थी। लंबी साहित्यिक यात्रा के बीच एम.टी ने जिन उपन्यासों की रचना की, वे पाठकों की स्वीकृति और बधाई के पात्र बने। असुरवित्त, कालम, मंत्र, रंडामूषम, वाराणसी आदि उनकी अन्य रचनाएँ थीं। 1960 से लिखने वाले लोगों में ओ वी विजयन, काक्कनाडन, मुकुंदन, वी.के.एन, आनंद, सेतु, पुनत्तिल, पी पद्मराजन, राजलक्ष्मी, एन पी मुहम्मद, विलासिनी, सी राधाकृष्णन, पी के बालकृष्णन, ललितांबिका अंतर्जनम, ई वासु, मलयाट्टूर, वी टी नंदकुमार, पेरुंबडवम श्रीधरन, पुतूर उण्णिकृष्णन, पी वत्सला, जोर्ज ओणक्कूर, यू ए खादर, वी ए असीस, सारा तोमस, पी आर श्यामला, वी.टी वर्की, पी.आर नाथन के नाम उल्लेखनीय हैं।

ओ वी विजयन का प्रथम उपन्यास था 'खसाकिन्टे इतिहासम'। भाषापरक और इतिवृत्तात्मक खूबियों के कारण मलयालम में अब तक प्रकाशित सबसे श्रेष्ठ रचना के रूप में इसका श्रेय है। सिर्फ एक अध्यापक वाले विद्यालय में अध्यापक के रूप में काम करने वाले रवि के जीवन की वैयक्तिक दुर्घटना इस उपन्यास का मूल विषय है। ओ वी विजयन द्वारा उस समय के समाज की सांस्कृतिक खामियों को बिना किसी घुमा-फिराव के साथ प्रस्तुत किया गया है। प्रतिक्रिया विहीन, अकर्मण्य लोगों के आधुनिक समाज की मूल्यहीनता का वर्णन उपन्यास का मुख्य विषय है।

काक्कनाडन का 'उष्ण मेखला' नामक चर्चित उपन्यास क्रांतिकारी राजनीतिक गतिविधि, व्यक्ति की निष्क्रियता, असफलता और हानि की भावना के मार्ग पर पाठकों को ले जाता है। समाज के अन्यायों के खिलाफ तीखी आवाज के रूप में 'ई नाय्क्कलुडे लोकम' (इन कुत्तों की दुनिया) को देखा जाना चाहिए। समाज के क्रूर चेहरे को काक्कनाडन ने सबके सामने प्रस्तुत किया है। "सेक्स और वासना को छिपाकर चित्रित किए जाने की आवश्यकता वह महसूस नहीं करते हैं। वह उस नई पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं जो वर्तमान को अस्वीकार करती है और समाज को चुनौती देती हुई आगे बढ़ती जाती है।"[5] काक्कनाडन की शैली उग्र तेवर की है। उनकी रचनाओं में आम तौर पर आत्म-त्याग का स्वर प्रतिध्वनित होता है। वह हमेशा यह तर्क देता है कि लेखक एक स्वतंत्र व्यक्तिहै जिसका समाज के प्रति कोई उत्तरदायित्व नहीं है, फिर भी उनके सभी पात्र समाज से ही प्रेरणा पाते दिखाई देते हैं।

पुनत्तिल कुंजाब्दुल्लाह साहित्य में आधुनिकता के समर्थक हैं। उनका मानना है कि केवल एक प्रताड़ित दिमाग ही रचनात्मक प्रतिक्रिया दे सकता है। अपने अस्तित्व पर ही सवाल खड़ा कर वह साहित्य के क्षेत्र में आये। अपने शुरुआती समय में ही यौन अनुभवों को महत्व देकर मनुष्य के मन की नग्नता को उन्होंने उजागर किया। सपने और सच को आपस में जोड़ने की शैली उनकी है। अपने अंदर मौजूद व्यर्थता की भावना, अस्तित्व बोध आदि को पात्रों के माध्यम से पुनत्तिल प्रस्तुत करते हैं। वैयक्तिक और सामाजिक दुर्घटनाओं के श्मशान घाट में प्यार की रोशनी बिखेरना उनका लक्ष्य है। समाज के नकली चेहरे का पर्दाफ़ाश करने के लिए अपनी सृजनात्मक शक्तिका प्रयोग भी वह करना चाहते हैं।

एम. मुकुंदन आधुनिकता की प्रवृत्तियों के अग्रणी रचनाकार हैं। जिन्होंने 'मय्यषीप्पुष़युटे तीरंगलिल' (मय्यषी नदी के तट पर) नामक उपन्यास लिखकर मलयालम साहित्य में अपनी अमिट छाप छोड़ी। मुकुंदन दिल्ली के फ्रांसीसी दूतावास के अधिकारी रह चुके हैं। 'मय्यषी नदी के तट पर' उपन्यास में मुकुंदन ने अतीत की संस्कृति के द्वंद्व से मुक्ति पाने वाले माही नामक जगह के संघर्ष की कहानी लिखी है। अपनी क्रांतिकारी भावना को व्यक्तिगत कमजोरियों के अधीन गिरवी रखने की बात पर मुकुंदन की आलोचना की गई है। मुकुंदन ने 'डलही' (दिल्ली) नामक अपने उपन्यास में गाँव की पवित्रता और मानवीय मूल्यों का बड़े शहरों में आकर पतनशील परिवर्तन के रूप लेने की बात कही है। 'दैवत्तिन्टे विकृतिकल' (ईश्वर की शरारतें) नामक उपन्यास को 'मय्यषी नदी के तट पर' की अगली कड़ी के रूप में माना जा सकता है। उपन्यास में

फ्रांसीसियों के माही छोड़ने के बाद उस छोटे-से क्षेत्र के सामाजिक जीवन को दर्शाया गया है।

संपूर्ण दुनिया को नकारने वाला तथा उसी को जीवन का लक्ष्य मानकर आधुनिक युवकों की हरकतों से लेखन की उर्जा प्राप्त करने वाला उपन्यासकार हैं पी पद्मराजन। युवाओं की ताकत और उर्जा के बारे में उनकी पर्याप्त जानकारी थी। उसे तेज़ और आकर्षक भाषा में वह प्रस्तुत करते थे। जीवन की निरर्थकता और समाज की अकर्मण्यता को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने में पद्मराजन सफल हुए थे। मनुष्य की आक्रमण वासना, सेक्स की वासना, आत्म निंदा आदि को पद्मराजन उसकी लायक गंभीरता के साथ प्रस्तुत करते रहे हैं। गांव की सुंदरता को उसकी कलात्मकता के साथ चित्रित करने में उनकी विशेष रुचि थी।

आनंद के विचार में गहरी सोच और गंभीर दृष्टिकोण से ही साहित्य उत्पन्न होता है। उनकी रचनाएँ पाठकों को सोचने-विचारने के लिए मजबूर करती हैं। मुंबई शहर को केंद्र में रखकर लिखा गया उनका उपन्यास 'आलक्कूट्टम' (भीड़) अलगाव की स्थिति की भयावहता को दर्शाता है। पात्रों की बहुलता के साथ यह उपन्यास पाठकों को जिन्दगी एक अभिशाप है - मानने को प्रेरित करता है। समाज के प्रहार से अकेले रेंगने वाले लोगों की वेदना को आनंद पकड़ते हैं और उसे अपनी रचनाओं में सूक्ष्म दृष्टि से प्रस्तुत करते हैं। 'गोवर्धन्टे यात्रकल', 'मरणासर्टिफिकेट', 'मरुभूमिकल उन्डाकुन्नत' आदि उनकी अन्य रचनाएँ हैं।

सेतु अस्तित्व की खोज करने वाली रचनाओं के महान रचनाकार हैं। पारिवारिक बंधनों में फंसकर बाहर निकलने के लिए त्रस्त होने वाले लोगों के संघर्षो को सेतु ने बड़े मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। उनकी रचनाओं में 'किलिमोषिकलक्कप्पुरम', 'पांडवापुरम' आदि चर्चित हैं।

माधविक्कुट्टी मनुष्य के दुख और उम्मीदों को पूरे सौंदर्य के साथ प्रस्तुत करने वाली रचनाकार हैं। स्त्रियों के कोमल, मधुर विचारों को वह अपनी रचनाओं में स्थान देती हैं। विस्तृत और संकीर्ण जीवन को माधविक्कुट्टी अनदेखा करती हैं। 'नीरमातलम पूत्ताकालम', 'केडल मयूरम', 'ओट्टायडिप्पाता' आदि उनकी महत्वपूर्ण रचनाएं हैं।

19 वीं सदी में केरल के सार्वजनिक क्षेत्र के राजनीतिक प्रतिनिधित्व करते हुए मलयालम उपन्यास सामने आया। 19 वीं सदी में केरल राज्य में औपनिवेशिक कब्जा, ईसाई मिशनरी गतिविधियां और स्वदेशी पुनर्जागरण जैसी प्रक्रियाएँ मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित कर रही थीं। मलयालम उपन्यास की शुरूआत को सांस्कृतिक निर्माण प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए जो आधुनिकीकरण का भी हिस्सा था। मुद्रण, प्रेस, अंग्रेजी शिक्षा, सूचना प्रौद्योगिकी, रेलवे आदि का भी इस संदर्भ में उल्लेख करना उचित लगता है। समकालीन मानव समाज को अपने अधीन करने वाली वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी, दलितों के जीवन की कठिनाइयाँ और परेशानियां, स्त्री के अस्तित्व, परिस्थिति के सौंदर्य का चित्रण आदि ने आधुनिक साहित्य की दुनिया को एक नया हाव-भाव दिया जिसे हम उत्तर आधुनिकता कहेंगे।

संदर्भ सूची

1. डॉ. प्रतापनारायण टंडन, हिंदी उपन्यास का उद्‌भव और विकास, पृ.10
2. रामचंद्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, पृ. 119
3. प्रमोद कुमार, संवेद, जुलाई 2013, पृ. 283
4. एरुमेली, मलयालम साहित्यम कालाखट्टन्गलिलूडे, पृ.425

इंदीवरम , मण्णूर, पोरोरा - पोस्ट

मट्टनूर, कण्णूर , केरल - 670702

'ड्रेन में रहनेवाली लड़कियाँ' में लड़कियों की आत्मा की आवाज़

डॉ ऐडा मानुवेल

सन् 1900 के आसपास भारत में लड़कियों की दशा बहुत शोचनीय थी। लोगों का दृष्टिकोण बहुत बुरा था। प्रायः लड़कियों को जन्म देते ही मार दिया जाता था। उन्हें बोझ समझा जाता था। यदि उनका जन्म हो जाता था तो पूरे घर में मातम छा जाता था। लड़के को ही महत्त्व दिया जाता था। ऐसे वातावरण में लड़कियों के पालन-पोषण तथा पढ़ाई-लिखाई आदि पर ध्यान नहीं दिया जाता था। समाज में बाल-विवाह, दहेज-प्रथा तथा सती-प्रथा जैसी कुरीतियाँ फ़ैली हुई थी। ऐसे वातावरण में लिखी कहानी है असगर वजाहत की 'ड्रेन में रहनेवाली लडकियाँ'।

कहानी की शुरुआत इस प्रकार है - "संसार से लडकियाँ गायब हो गयी हैं। पूरी दुनिया में अब कोई लडकी नहीं है। यह विचित्र स्थिति पैदा कैसे हुई? कहानी इसके कारण को सूचती है। यह सरला की कहानी है। अस्पताल में नर्स ने सरला से बताया - उसे लडकी हुई है। पर दुखद बात यह है कि न सास, न ससुर, न पति, न देवर, न ननद कोई सरला से मिलने नहीं आया। कारण उनसे कई लड़कियो के जन्म हुए है - पहली लडकी का जन्म, दूसरी लडकी और अब तीसरी। वे बहुत वेदना से रह गयी। सरला ने बच्ची को दूध पिलाने के बाद बाथरूम जाकर उसे 'पाट' में डाल दिया। जंजीर जला दी। यह देखने के लिए नहीं रुकी कि बच्ची फ़्लैश के पानी से बहकर गटर में गयी या नहीं। उसने वहाँ एक हिचकी जैसी आवाज़ सुनी। उसने सोचा कि यह मामूली आवाज़ है। अगर वह बच जाती तो उसके रोने से धरती फट पड़ती। थोड़ी देर बाद नर्स आने पर सरला ने सबकुछ नर्स से बता दिया। यहाँ भ्रूण हत्या का जिक्र किया गया है कि आज भ्रूण-हत्याएँ बढ़ रही हैं, इसलिए सरकार कड़े कानून बना रहीं है। 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' सरकार द्वारा शुरू की गई सबसे हालिया पहल है, जिसका उद्देश्य लोगों को लड़कियों को बचाने के लिए सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करना है। यह भारत सरकार की सबसे महत्वाकांक्षी योजनाओं में से एक है, जिसका उद्देश्य व्यापक जागरूकता पैदा करना और महिलाओं को बेहतर तरीके से सेवाओं तक पहुँचने में मदद करना है।

आज लड़कियों के जन्म के संबंध में स्थितियाँ थोड़ी बदली हैं। आज शिक्षा के माध्यम से लोग सजग हो रहे हैं। लड़का-लड़की का अंतर धीरे-धीरे कम हो रहा है। आज लड़कियों को लड़कों की तरह पढ़ाया-लिखाया भी जाता है। परंतु लड़कियों के साथ भेदभाव पूरी-तरह समाप्त नहीं हुआ है। इसी कारण से सरला जैसी असहाय, उत्पीडित और उपेक्षित स्त्रियाँ समाज की हकीकत हैं।

सरला का विषय अदालत में आ गया। सरला का बयान सटीक था। सरला का मानना था कि - "उसने अपनी बच्ची के सुन्दर भविष्य के लिए किया है, माँ - बाप का काम अपने बच्चों के भविष्य को सुधारना है।"[2] जज ने सरला को छोड़ दिया और यह साबित हो गया कि यह होश हवास में नहीं किया है। सब को यह समझना चाहिए कि आज की लड़कियाँ कल की महिलाएँ हैं। उनके सुन्दर भविष्य के लिए अच्छी शिक्षा देनी चाहिए। लड़कियों को बोझ मानने की मानसिकता को जमीनी स्तर पर बदलना होगा और जागरूकता फैलाना होगा। इसमें शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण है और यह महिलाओं को सशक्त बनाएगी ।

रात में 'गटर' से निकलकर बहुत ही सुन्दरी होकर असकी लड़की सरला के पास आ गयी। बच्ची ने माँ से कहा- "चलो तुम भी मेरे साथ 'गटर' में चलो वहाँ बड़ा आराम है। लेकिन अफ़सोस था कि माँ वहाँ जा नहीं सकती थी। जाती जाती बच्ची ने कहा- "चिंता मत करो माँ.....तुम आ जाओगी.....एक दिन आ जाओगी।"[3] बच्ची अपनी माँ की वेदना समझती है। अपने आराम को वह शेयर करना चाहती है। लड़कियाँ अपने परिवार और माता-पिता के प्रति देखभाल और प्यार करने वाली होती हैं और वे हर काम में अपना सर्वश्रेष्ठ देती हैं।

सरला का जीवन अपने घर में बहुत दर्दनाक पड गया। दुरवस्थाओं से जीवन गुज़ारना पडा। सरला के पति जगदीश्वर को बिरादरी में ही एक अच्छा रास्ता मिला। उन्हें अच्छा सा लगा, दहेज भी अच्छा मिलनेवाला था। उन्हें सरला एक बाधा बन गयी। एक दिन तेल न होने के बावजूद 'स्टोव' फटकर सरला सौ प्रतिशत जल गयी। उनकी मृत्यु हो गयी। सरला के पिता, दो भाई सब ने आकर राख के पैर छूकर नमस्कार किया। पुलिस से बयान किया कि वह मानसिक रूप से असंतुलित थी और लापरवाही

के कारण ही 'स्टोव' फट गया है। असंतुलित और लापरवाही के थोप लेकर पूर्ण रूप से जलकर सरला पूरी राख हो गयी थी। पति ने कहा आगे इसे क्यों जलाना, पूरी राख हो गयी है। क्या किया कि लाश को गाट में, जहां बेटी को बहाया था वहाँ बहाने का निश्चय किया।

इसकी मुकदमा चलाने के लिए कोइ नहीं था। बड़े लडके, छोटा लड़का सब अपने अपने काम पर व्यस्त थे। एक लडकी ब्याहने को थी। वे बदनाम हो गयी तो लड़का तक न मिलेगा - कहकर सब वहीं समाप्त कर दिया। उसी रात 'ड्रेन' में यानी गंदे नाले वाले पाइप में सरला बच्ची से मिली। दोनों मिलकर बहुत प्रसन्न हुई। वहाँ 'ड्रेन' लड़कियों की दुनिया थी। तितलियों की तरह उडती, महकती, चिडियों की तरह गाती..........हर लडकी।

समय बीतता गया। आखिरकार दुनिया में लडकियाँ खत्म हो गयीं। यानी सब लडकियाँ 'ड्रेन' में पहुँच गयी थीं। पुरुष संसार बडी परेशानी में पड गया। मानव जीवन का अस्तित्व केवल पुरुषों और महिलाओं दोनों की समान भागीदारी से ही संभव है क्योंकि वे दोनों इस ग्रह पृथ्वी पर मानव जाति के अस्तित्व के लिए समान रूप से जिम्मेदार हैं। दोनों लिंगों की समान भागीदारी एक राष्ट्र के विकास के लिए उत्तरदायी है और महिलाओं का अस्तित्व अधिक महत्वपूर्ण है। सभ्यता का निर्णय दोनों साथ साथ लेते है। अपने जीवनकाल के दौरान, महिलाएँ एक बेटी, माँ, गुरु, बहन, पत्नी, चाची और दादी के रूप में प्रमुख भूमिका निभाती हैं।

समाज आदर्श माँ, पत्नी, बहन और बेटी की कामना करता है, लेकिन यह कैसे संभव हो सकता है जब लड़की को माँ के गर्भ में ही मार दिया जाता है, और अगर वे पैदा होती हैं तो उनके साथ जीवन भर भेदभाव किया जाता है, उन्हें अच्छा पौष्टिक भोजन नहीं दिया जाता है, और यहाँ तक कि उन्हें आवश्यक शिक्षा भी नहीं दी जाती है जो उनके समग्र शारीरिक और मानसिक विकास को बढ़ावा देती है। समाज में कई सामाजिक बुराइयाँ माता-पिता को लड़की पैदा करने से मना करती हैं और अन्य सामाजिक बुराइयाँ वे हैं जो दहेज़ को जन्म देने के लिए जिम्मेदार हैं।

संयोगवश एक आदमी ने एक 'गटर' खोला तो उसे अद्वितीय सुंदरियाँ दिखाई पडी। पुरुषों के बीच में यही बातचीत हो गयी। पर किसी के पास 'ड्रेन' में उतरने की हिम्मत नहीं थी। एक दिन लडकी की खोज में सबसे हिम्मतवाला पुरुष 'गटर' में उतरा। वहाँ सभी सुन्दरियों को देखकर उनकी आंखे खुली ही रह गयीं। उस आदमी ने सरला की लडकी के सौंदर्य पर आकर्षित होकर ब्याह करने का निवेदन किया। तब लड़कियों ने आदमी को घेर लिया और पूछा कि तुम यहाँ आए क्यों हो? आदमी ने कहा कि लडकी की खोज में आया है। उसने लड़कियों से विवाह करने का, प्रेमी बनने का, दिल की रानी बनाने का सब वादा किया। लड़कियों ने कहा सभी पुरुषों ने अपना पुरुषत्व देकर आपको यहाँ भेजा है। इसलिए वापस जाना है तो पुरुषत्व यहाँ रखकर जाना चाहिए।

पुरुष घबरा गया। वह वापस में ड्रेन से गया तो उसके पास पुरुषत्व नहीं था। क्यों? पुरुषत्व अब लड़कियों के पास है। लडकियाँ ही तय करती है कि पुरुष प्रधान समाज को कायम रखना है या नहीं। बिना महिलाओं के अस्तित्व से पुरुषमेधा समाज की शून्यता की और कहानीकार यहाँ इशारा देता है।

एक ऐसा युग था कि लड़कियों को बंद कमरे की चार दीवारी के अंदर कैद करके रखा जाता था। शिक्षा पाने का अधिकार भी केवल लड़कों को ही मिलता था। कुछ उच्च वर्गो की लड़कियाँ ही शिक्षित थी परन्तु उसकी संख्या भी गिनी चुनी थी। ऐसी लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। ये सब महिलाओं के उच्चस्तरीयता के कारण ही है। इसलिए कहानीकार कहना चाहता है कि पुरुषत्व वास्तव में महिलाओं के कारण ही है। कहानीकार यह निष्कर्ष पर पहुँचते है कि आज संसार में रहनेवाले पुरुषों के पास पुरुषत्व नहीं है जो ड्रेन में रहनेवाली लड़कियों के पास है। नारी के अस्तित्व से ही पुरुषों के पुरुषत्व को स्थान मिलते है। नहीं तो लडकियाँ जहाँ हो वहाँ पुरुषत्व बनते है।

संदर्भ :

1. असगर वजाहत - चुनी हुई कहानियाँः ड्रेन में रहनेवाली लडकियाँ-सं.अनीता मिश्रा, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2016, पृ.20

2. वही -पृ.20, 3. वही -पृ.21, 4. वही -पृ.21
5. वही -पृ.22

एसोसिएट प्रोफेसर
सरकारी विक्टोरिया कॉलेज , पालक्काड़

शताब्दी में भी समकालीन 'रंग भूमि'

सुबहाना एन

हिन्दी के उपन्यास सम्राट प्रेमचंद के साहित्य में आधुनिक जन-चेतना एवं युग-जीवन की लहरें लहरा उठी है। उन्होनें हिन्दी साहित्य में यथार्थवाद की नींव डाली है। साहित्य समाज का प्रतिबिंब है। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों के जरिए इस कथन को अधिक मूल्यवान बनाने का प्रयास किया है। उन्होंने अपने उपन्यासों के जरिए भारतीय समाज का जो चित्रण किया है, यह केवल उनके समय का समाज नहीं, बल्कि आधुनिक समाज भी इसमें दृष्टव्य है। अपने उपन्यासों द्वारा समाज के स्वरूप को बिगड़ करने वाले सभी सामाजिक बुराइयों को जड़ से काटने का प्रयास किया है।

'रंगभूमि' को प्रेमचंद की कालजयी कृति कहा जा सकता है। पूंजीवाद के विरुद्ध जन संघर्ष, सर्वहारा वर्ग की दुर्दशा का भयानक चित्रण, सत्य, निष्टा एवं अहिंसा के प्रति आग्रह और अपने पर होने वाले शोषण के विरुद्ध लड़ाई आदि प्रस्तुत उपन्यास का मूल विषय है, जो आधुनिक समाज में भी मौजूद है। प्रस्तुत उपन्यास का कथासार इस प्रकार है- बनारस में स्थित पाँडेपुर गाँव 'रंगभूमि' का कथा स्थान है। यह एक ऐसा बस्ती है, वहाँ शहरी दीपकों की प्रकाश, शहरी छिटकाव के छींटे या शहरी जल स्रोतों का प्रवाह भी न पहुँचती हैं। इस गरीब बस्ती में ग्वाले, मज़दूर, गाड़ीवान और खोमचे वालों के साथ सूरदास नाम के एक गरीब अंधा चमार रहता है। वही इस उपन्यास का नायक है। सूरदास एक दुर्बल, बहुत क्षीणकाय भिखारी है। लेकिन उनके पास अपने पुरखों द्वारा दिया गया 10 बीघा धरती है। इसके सामने जॉन सेवक नामक ईसाई की चमड़े की आढ़त भी है। जॉन सेवक सूरदास की धरती पर सिगरेट का कारखाना खोलना चाहता है। लेकिन सूरदास अपने पुरखों की एकमात्र निशानी को बनाए रखना चाहते है। जॉन सेवक अनेक वादाएँ देकर सूरदास को अपने वश में लाने का प्रयास करता है। लेकिन वे अपनी धरती को बेचने से इनकार करती है। लेकिन जॉन सेवक अधिकारियों से सहारा लेकर उसे हिलाने की योजना बनाता है। इस जमीन के नाम पर जॉन सेवक के अनुयायियों और कसबेवालों के बीच झगड़ा उत्पन्न हुआ है।

मिसेज सेवक और पुत्री सोफिया के बीच धर्म के नाम पर झगड़ा हो रहा है। बाद में सोफिया घर से बाहर निकलती है। इसी बीच वे आग के लपटों में फँस जाते कुँवर भरत सिंह के पुत्र विनय को देखते हैं। उसे बचाने की कोशिश में आग ने सोफिया को कई जगह झुलसा दिया। विनय के माता-पिता सोफिया को अपने साथ ले गए और उसका इलाज भी कराया। विनय की बहन इंदु सोफिया की सहेली है। इंदु की शादी छतारी के राजा महेंद्र कुमार से हुआ था। इंदु के द्वारा विनय के परिवारवालों ने सोफिया से परिचय प्राप्त किया था। विनय और अपना परिवार वाले सोफिया को वहाँ की बहू बनाना चाहता है। लेकिन बनारस के जिला अधिकारी क्लार्क नामक अंग्रेजी अफसर सोफिया पर आसक्तथा। जॉ सेवक और मीसेज़ सेवक क्लार्क से सहमत भी है।

जॉन सेवक कारखाना खोलने के बारे में राजा कुँवर साहब से बातें करते हैं। पहले कुँवर जी इसका इनकार कर रहे हैं, क्योंकि उनको मालूम था कि तंबाखू अच्छा चीज तो नहीं है इससे उनके राज्य की स्थिति बिगड़ जाएगी। लेकिन ज़न सेवक अनेक वादें देकर कुँवर साहब को भी इस कारखाने की हिस्सेदारी बना लेता है। साथ-साथ राजा महेंद्र कुमार सिंह से सूरदास की जमीन दिलवा देने की स्वीकृति प्राप्त कर ली। लेकिन सोफिया क्लार्क से मिलकर महेंद्र कुमार के आदेश को रद्द करवाकर यह आदेश देता है कि सूरे की भूमि किसी को न दे। लेकिन राजा महेंद्र कुमार गवर्नर से मिलकर वह भूमि जॉन सेवक को देते हैं।

कारखाना बनाने के लिए और उसके साथ ही कारखाने की मजदूरों के लिए घर बनाने के लिए पांडेपुर बस्ती के लोगों को अपना-अपना मुआवजा लेकर घर छोड़ने का आदेश देते हैं। लेकिन सूरदास ने अपनी झोंपड़ी न छोड़कर इसके सामने सत्याग्रह कर दिया है। धीरे-धीरे झगड़ा आंदोलन के रूप में परिवर्तित हो गया। सूरदास को सहायता देने के लिए सोफिया, विनय और स्वयं सेवक इंद्रदत्त भी आते हैं। दूसरी ओर आंदोलन को दबाने के लिए

फौज भी आते हैं। आंदोलन बढ़ती गई। गोलियाँ चलने पर इंद्रदत्त शहीद हो गए। क्लार्क ने सूरदास पर गोली चलाई। विनय मंच पर आए तो जनता ने उनपर व्यंग्यों की बौछार की। तब विनय ने अपने जेब से भरी हुई पिस्तौल निकालकर छाती में उसकी नली लगाकर वीर मृत्यु प्राप्त की। सोफिया ने सूरदास को अस्पताल पहुँचा दिया। राजा साहब ने सूरदास से अपने भूलों की क्षमा माँगकर अपनी पत्नी जाह्नवी और सोफिया के साथ उसकी सेवा की। जॉन सेवक ने भी सूरदास से क्षमा मांगी। सब उसके जान बचाने का कठिन प्रयत्न करने पर भी उन्हें बचा नहीं सका। मृत्यु के छः महीने के बाद जॉन सेवक के आज्ञानुसार सूरदास की झोंपड़ी की जगह उसकी मूर्ति स्थापित की गई। रात में राजा महेंद्र कुमार सिंह ने मूर्ति तोड़ डाली और खुद उसके नीचे दब गया। मृत्यु में भी उसका स्थान सूरदास के नीचे था।

'रंगभूमि' भारतीय जन-जीवन का रंगमंच है। वर्तमान युग-जीवन के सभी प्रतिनिधि पात्र इस मंच पर सच्चा अभिनय करते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में औद्योगिकीकरण एवं पूँजी का विरोध, वैयक्तिक्र अधिकारों की सुरक्षा, धार्मिक रूढ़िवाद का विरोध, नारी विमर्श, जनांन्दोलन का समर्थन, अंग्रेजी राजनीति के थोथी व नकली आदर्शवादिता, दूषित राजनीति, स्वार्थपरता आदि मूर्त हो उठा है। जॉन सेवक में आज के स्वार्थ नेताओं को देख सकते हैं। वे आज के राजनीतिज्ञों और पूँजीपतियों की तरह अनेक वादें देकर अपने स्वार्थ की पूर्ति करने का प्रयास करते हैं। वह सूरदास से कहता है कि "यहाँ एक कारखाना खोलूँगा, जिससे देश और जाति की उन्नति होगी, गरीबों का उपकार होगा, हज़ारों आदमियों की रोटियाँ चलेंगी। इसका यश भी तुम्हीं को होगा।" वास्तव में आज यही हो रहा है। अपने स्वार्थ के लिए पूंजीवर्ग और नेतागण आम आदमी को झूठे वायदा देकर अपने जाल में फँसाने की कोशिश करता है। यदि वह सहमत नहीं है तो अधिकार का सहारा लेकर उनसे छीन लेता है। यही इस उपन्यास में भी हुआ है। सूरदास जमीन देने से इनकार करने पर जॉन सेवक ने राजासहब और कुमार सिंह की सहायता लेकर सूरदास की भूमि छीन ली है।

इसी प्रकार समकालीन साहित्य की एक प्रमुख प्रवृत्ति है दिव्यांग विमर्श। प्रेमचंद ने सौ साल पहले इस उपन्यास में दिव्यांग व्यक्ति की मानसिक पीड़ा और दिव्यांगों के प्रति समाज का दृष्टिकोण आदि का अंकन किया है। सूरदास को देखकर मिसेज सेवक कहती है कि "क्यों रे अंधे, तू भीख क्यों माँगता है? कोई काम क्यों नहीं करता? तेरे भगवान ने तुझे अंधा क्यों बना दिया? इसलिए कि तू भीख माँगता फिरे? तेरा भगवान बड़ा अन्यायी है। मैं अगर अंधी होती तो खुदा को कभी माफ न करती।" सोफिया के कहने पर भी वह इस प्रकार के अनादर की बातें रोकने के लिए तैयार नहीं है। प्रेमचंद कहता है कि- "चंचल प्रकृति के बालकों के लिए अंधे विनोद की वस्तु हुआ करते हैं।" सूरदास को इन बच्चों के कारण अनेक यातनाएँ सहना पड़ता है। "कोई उसकी लाठी छीनकर भागता, कोई कहता- सूरदास, सामने गड्ढा है, बाई तरफ हो जाओ। सूरदास बाएँ घूमता तो गड्ढे में गिर पड़ता।" प्रेमचंद ने यह स्थापित करने का प्रयास किया है कि दिव्यांग लोग समाज के लिए मज़ाक उठाने की चीज या खेलने की वस्तु नहीं है। उनमें साधारण व्यक्ति जैसी क्षमता है।

समकालीन दलित साहित्य में दलितों पर होनेवाले अन्याय और अत्याचार का जो चित्रण है, वह भी प्रस्तुत उपन्यास में हम देख सकते हैं। उनकी बस्तियों की बुरी हालत भी हम इस उपन्यास में देख सकते हैं। सूरदास के आत्म-चिंतन के जरिए गरीब दलितों को कुत्ते की तरह देखने वाले उच्च वर्ग को प्रेमचंद प्रकाश में लाया है कि- "यह है बड़े आदमियों की स्वार्थपरता! पहले कैसे हेकड़ी दिखते थे, मुझे कुत्ते से भी नीच समझ।"

आधुनिक समाज में हर व्यक्ति केवल अपना फायदा ही देखता है। इससे दूसरों को कोई कष्ट सहना पड़ता है या नहीं, उनको इसकी चिंता तक नहीं। अपने चारों ओर अन्याय फैलने के बाद भी आदमी केवल अपने फायदा लेकर मौन रहता है। समाज की इस हालत का चित्रण भैरों के इस कथन से व्यक्त होता है- "दुनिया अपना ही फायदा देखती है। अपना कल्याण हो, दूसरे जिएँ या मरें। बजरंगी, तुम्हारी तो गायें चरती हैं, इसलिए तुम्हारी भलाई तो इसी में है कि जमीन बनी रहे। मेरी कौन गाय चरती है? कारखाना खुला तो मेरी बिक्री चौगुनी हो जाएगी। यह बात तुम्हारे ध्यान में क्यों नहीं आई? तुम सबकी तरफ से वकालत करने वाले कौन हो? सूरे की जमीन है, वह

बेचे या रखे, तुम कौन होते हो, बीच में कूदनेवाले?"

सोफिया के माध्यम से आज की नारी को प्रेमचंद ने यहाँ अंकित किया है। अपनी इच्छा के अनुसार अपने जीवन साथी को चुनने में उन्हें अपने परिवार की ओर से अनेक कठिनाइयाँ सामना करना पड़ता है। उसे अपनी माँ मिसेज सेवक क्लार्क से प्रोपोज़ करने केलिए मजबूर करती है। यही आज हो रहा है। अधिकांश स्त्रियों को अपनी इच्छा के अनुसार जीने का मौका भी नहीं मिलता है। अपने माँ-बाप और परिवार वालों के इच्छानुसार जीवन बिताना पड़ता है। इसी प्रकार शोषण के शिकार होनेवाले स्त्रियों की आवाज बनकर सोफिया कहती है कि- "मेरा नैतिक और मानसिक पतन हो गया है। अब मैं अपने सिद्धांतों पर जान देनेवाली, अपने ईमान को ईश्वरीय इच्छा समझने वाली, धर्म-तत्वों को तर्क की कसौटी पर रखनेवाली सोफिया नहीं हूँ। वह सोफिया संसार में नहीं है। अब मैं जो कुछ हूँ, वह अपने मुँह से कहते हुए मुझे स्वयं लज्जा आती है।" सोफिया को प्रेमचंद ने एक आदर्श नारी के रूप में चित्रित किया है, अनीति एवं अत्याचार के विरुद्ध के संघर्ष से कोई रिश्ता के बंधन उसे पीछे हटाये ही नहीं। अपने परिवार से अनेक कठिनाइयाँ सहने के बाद भी वे गरीब सूरदास के लिए लड़ रहा है। सोफिया एक विद्रोही नारी भी है, जो आज अपने अधिकारों तथा अस्मिता के लिए लड़ रही नारियों का प्रतीक है।

राजा कुमार सिंह आज के ईर्ष्यालु व्यक्तियों का प्रतीक है। एक व्यक्ति की मृत्यु के उपरांत भी उस पर वैराग्य बनाए रखने वाले आदमियों का सदा नाश होगा। यह उपदेश कुमारसिंह के चरित्र से हमें समझाने का प्रयास लेखक ने किया है।

रंगभूमि को कालजयी उपन्यास इसलिए कह सकता है कि समकालीन समाज में जो कुछ चल रहा है, चाहे वह सामाजिक हो, राजनीतिक हो, आर्थिक हो या धार्मिक हो वह सब सौ वर्ष पहले प्रेमचंद ने अपने इस उपन्यास में चित्रित किया है।

शोधनिर्देशक : डॉ इंदु के वी
सह आचार्य, हिंदी विभाग, केरल विश्वविद्यालय

सहायक ग्रंथ सूची

1. डॉ रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य
2. रंगभूमि, प्रेमचंद

शोधार्थी, हिन्दी विभाग
केरल विश्वविद्यालय , कार्यवट्टम

कीर्तिशेष प्रो.डी.तंकप्पन नायर को (केरल ज्योति के मुख्य संपादक एवं वरिष्ठ अनुवादक) श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए प्रामाणिक प्रचारक श्री.के.एन.सुनिल कुमार और छात्र गण। (आलंगाड हिंदी विद्यालय, एरणाकुलम जिला)

आलंगाड केन्द्रीय हिंदी महाविद्यालय के तत्त्वावधान में 20.09.2025 को आयोजित 'हिंदी सप्ताह' समापन सम्मेलन में उद्घाटक श्री.वी.डी.सतीशन (विधान सभा के विपक्ष नेता) साहित्याचार्य परीक्षा में प्रथम रैंक प्राप्त (राज्य स्तर पर) श्री.के.एस.प्रेमचंद को मेमन्टो प्रदान करते हैं। हिंदी प्रचारक श्री.के.एन.सुनिल कुमार, श्रीमती.पी.एस.जयलक्ष्मी, डॉ.रश्मी कृष्णन, श्री.पी.एस.जगदीशन आदि मंच पर हैं।

मुस्लिम स्त्री की संवेदनाएँ : हिंदी कहानी में

वैष्णवी बी

मुस्लिम समुदाय भारत का अल्पसंख्यक समुदाय के अंतर्गत आता है। वैसे तो ईसाई, बौद्ध, सिख, फारसी, जैन आदि अन्य समुदाय भी अल्पसंख्यक समुदाय के अंदर आते हैं। किन्तु मुस्लिम समुदाय ने धार्मिक, इतिहास एवं अपनी विशिष्ट भूमिका के कारण अलग स्थान बनाया है। भारत विभाजन की घटना इस देश के सबसे बड़ी त्रासदी है जिसमें संस्कृति को सांप्रदायिकता के माध्यम से बांटने का प्रयास किया गया। विभाजन के कारण हिंदुओं और मुसलमानों का बहुत नुकसान हुआ। भारत विभाजन के बाद भारत में रहे मुसलमानों की स्थिति ही बदल गई। वह इस देश का हिस्सा होने के बावजूद उनपर अस्तित्व का सवाल उठता रहता है। फिर भी वह समाज हो या साहित्य अपने योगदान से पीछे नहीं हटते। भारत एक ऐसा देश है जहां अनेक संस्कृतियाँ पनपी हैं। भारत में मुस्लिमों का आगमन इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है।इस घटना से भारत के इतिहास में एक अलग मोड़ आया।इनके आगमन से भारत वर्ष के हर क्षेत्र में बदलाव आए। सल्तनत काल से आधुनिक काल तक लिखे गए कहानियों में कहानिकारों ने मुस्लिम समाज जीवन संबंधी विविध आयामों में यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है। बंटवारे के बाद मुस्लिम समाज में अनेक समस्याएं पैदा हुईं। "मुसलमान मर्द एक मानसिक संताप से गुजरने लगे थे। उनको बंटवारे की हिंसा में अपनी औरतों पर हुए अत्याचार कोड़े लगाते और अपने साथियों द्वारा पराई औरत की इज्जत लूटते देखने की बेबसी उन्हें तड़पाती थी। इसका नतीजा यह निकला कि अनजाने ही वे इस मनोग्रन्थि के शिकार हो गए कि वे औरतों की हिफ़ाजत में अब कोताही न बरतें और पराई औरतों से दूरी रखें। उन्होंने अपनी बेबसी और कमजोरी की कुंठा औरतों पर लादनी शुरू कर दी।"[1]

इस हिफ़ासत से ये औरतें शिक्षा और समाज की अन्य गतिविधियों से वंचित हो गईं। सामाजिक,ज्ञान -विज्ञान और साहित्य आदि से तो वे दूर थी ही दीनी शिक्षा के नाम पर भी उन्हें परदे पर भी उन्हें ऐसी बातें ही बताई गईं जो उनका शोषण होने देने में मददगार थीं। उन्हें परदे दर परदे में रखा जाने लगा। इन कारणों से वे समाज की मुख्यधारा से अलग हो गई। इन बातों का यह प्रभाव पड़ा कि, "उनको अपने धर्म का पूरा ज्ञान नहीं तो भी वह उस पर आँख मूंदकर विश्वास करती है,क्योंकि उनको विरासत में यही मिला है कि धर्म के मामले में मौलवी साहब का और घरेलू मामलों में शौहर का कहना मानना ही जन्नत जाने के दरवाजे की कुंजी है। शौहर मजाज़ी खुद अर्थात सांसारिक भगवान है , जो पत्नी को उसका हिस्सा देता है। शदाबतियों से मुसलमानी औरत अपनी कमजोरियों,अशिक्षा,बेजा मन से अत्याचार का शिकार होती आई है और इस पीड़ा को ही अपनी नियति और इस्लाम धर्म की नीति मानकर सबकुछ सहती रहती है।"[2]

भारतीय समाज का अभिन्न अंग बन गया है मुस्लिम समाज। मुस्लिम स्त्री,मुस्लिम समाज का अहम हिस्सा है। वह अपनी जन्म से लेकर मृत्यु तक अपने घर-परिवार के लिए महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाती रहती हैं।इस्लाम ने स्त्रियों के लिए रहन-सहन तथा पहनावे पर भी उचित आदेश दिए हैं। मुस्लिम समाज की पारिवारिक निर्माण स्थितियों के अंतर्गत स्त्रियों के घर में बड़े- बुजुर्गो, रिश्ते- नातेदारों एवं

बाहरी लोगों से पर्दा करना एक अनिवार्यता है।इस्लामी शरीअतों में मुस्लिम स्त्रियों को धर्म शिक्षा की पूर्ण स्वतंत्रता है। उनको पर्दे के साथ ही उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकती है।इतना ही नहीं वे मेहर और दहेज की खुद हकदार होती है। उसका एक उदाहरण इस प्रकार है कि "इस्लाम औरत को हर किस्म की आज़ादी देता है,इसकी सलाहियत का कद्र करता है,मगर हिजाब(पर्दा) और एहसास - ए - इफ्फन के साथ।"[3]

मुस्लिम स्त्रियों का अवलोकन सामाजिक परिप्रेक्ष्य के आधार पर देखा जाए तो पता चलता है कि भारतीय संस्थानों और सांस्कृतिक की अधीनता में मुस्लिम महिला का योगदान महत्वपूर्ण है।हिंदू सामाजिक व्यवस्था के समान मुस्लिम सामाजिक व्यवस्था ने भी ज्यादातर उतार- चढ़ाव का सामना किया है। उनको तलाक संबंधी अधिकार भी निषेध है।जितना तलाक देने का अधिकार पुरुष को प्राप्त है उतना अधिकार एवं स्वतंत्रता मुस्लिम स्त्री को नहीं है। उनकी धार्मिक कट्टरता भी मुस्लिम स्त्रियों को मिलनेवाले अधिकार एवं स्वतंत्रता से उन्हें वंचित किया जाता है।इतना ही नहीं मुस्लिम समाज में उनका धर्म एक पुरुष को चार पत्नियाँ रखने की अनुमति देता है और साथ ही पत्नियों को समतापूर्ण अधिकार होने की बात पर जोर देता है। इनको पर्दा प्रथा का अनुसरण जीवन भर करना पड़ता है। निकाह संबंधी अधिकार भी उनसे छीना जाता है। मुस्लिम संसार में निकाह से संबंधित यों बताया है कि-"निकाह धार्मिक अनिवार्य व संस्कार व सामाजिक स्वीकृति है।"[4]

आर्थिक परिप्रेक्ष्य के धरातल पर मुस्लिम स्त्रियों का अवलोकन किया जाए तो पुरुषों के समान स्त्री को भी अपनी निजी जरूरतों की पूर्ति के लिए अर्थ की आवश्यकता रहती है। मुस्लिम नारियाँ अपनी उपजीविका चलाने के लिए नौकरी, व्यवसाय एवं उद्योग करके अपना अलग पहचान बनाती है।

स्वतंत्रता पूर्व की कहानियों में मुस्लिम नारियों का अध्ययन के अंतर्गत उस समय के सामाजिक एवं अन्य समस्याओं को तत्कालीन कहानिकारों ने अपने विषय के रूप में चुना। इस तरह इन कहानियों की ऐतिहासिक दृष्टि पर नज़र डालने पर ज्ञात होता है कि इतिहास में मुस्लिम शासक विलासप्रिय एवं नारी प्रिय थे।औरत का सम्मान भी नहीं करते थे। उनकी दृष्टि में नारी केवल भोग और एकाधिकार की वस्तु है।इसका प्रमाण प्रेमचंद की 'परीक्षा' कहानी तथा चतुरसेन शास्त्री की 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' में मिलता है। जैसे बादशाह के जुल्मों को दर्शाते हुए एक दृष्टव्य इस प्रकार है "हाय बादशाहों की बेगम होना भी बदनसीबी है! इंतजारी करते-करते आँख फूट जाए,मिन्नते करते-करते जबान घिस जाये, अदब करते-करते जिस्म के टुकड़े-टुकड़े हो जाए फिर भी इतनी-सी बात पर,जाग न सकी,इतनी सजा? इतनी बेइज्जती?"[5]

स्वतंत्रता पूर्व की कहानियों में चित्रित मुस्लिम स्त्रियों की धार्मिक और पारिवारिक दृष्टि का अपना अलग महत्व रहता है। मुस्लिम स्त्रियाँ धार्मिक आडंबरों एवं अंधविश्वासों पर विश्वास रखने का चित्रण शानी के 'जगह दो रहमत के फ़रिश्ते आयेंगे' में और 'बीच के लोग' कहानी में धार्मिक रीति-रिवाजों पर व्यंग्य करने का चित्रण भी मिलता है। मुस्लिम पति -पत्नी के आत्म बंधन का चित्रण प्रेमचंद की 'न्याय' कहानी में देखने को मिलता है।

स्वातंत्र्योत्तर काल की कहानियों में चित्रित मुस्लिम स्त्री। उनकी आर्थिक दशा पर नज़र डालने पर पता चलता है कि निम्न एवं मध्य वर्ग की मुस्लिम स्त्रियों ने कई आर्थिक संकटों का सामना किया है। इतना ही नहीं उन्हें पारिवारिक समस्याओं तथा कष्टताओं का भी सामना करना पड़ता है। शानी के 'नंगे' एवं मेहरुन्निसा परवेज की 'त्योहार' नामक कहानियाँ इसका उदाहरण है। मंजूर एहतेशाम की 'तमाशा' और अब्दुल बिस्मिल्लाह की 'आग' कहानी

में मुस्लिम स्त्रियों की आर्थिक कठिनाइयों से उत्पन्न पारिवारिक समयायें अंकित की गई। बहुविवाह से उत्पन्न आर्थिक समस्या को नफीस आफरीदी की 'अर्धविराम' कहानी में दर्शाया है। मध्यवर्गीय मुस्लिम स्त्री की मानसिकता का चित्रण मेराज अहमद की 'तरक्की' कहानी में है और नासिरा शर्मा की 'कागजी बादाम' कहानी में मुस्लिम नारी का आर्थिक शोषण का चित्रण मिलता है।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में मुस्लिम महिलाओं की स्थिति मिश्रित रूप में थी । जैसे कि शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता में वृद्धि कर रही थी, उसी समय लैंगिक असमानताओं एवं सामाजिक-धार्मिक रूढ़ियों से उलझ रही थी। परिवार में निर्णय लेने की स्वतंत्रता सीमित थी। पर्दा प्रथा और समाजी-अलगाव भी उन्हें मानसिक रूप से झकझोर दिया। तलाक और बहुविवाह जैसी प्रथाएँ उनकी हालत को और खराब कर रही थीं। स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत में राजनीति का बोलबाला हो रहा था। इसके कारण मुस्लिम समाज में पारंपरिक मूल्यों का विघटन एवं नवीन मूल्यों का पदार्पण हुआ। इन सभी का असर मुस्लिम स्त्रियों पर भी हुआ। राजनीतिक परिस्थितियों से पीड़ित मुस्लिम औरत का चित्रण नासिरा शर्मा ने अपनी कहानी 'गूंगा आसमान' में किया है।

इस काल के धार्मिक दशा के परिणामस्वरूप कहानियों में अनेक धार्मिक बोध देखने को मिलता है। नासिरा शर्मा के 'जहांनुमा' कहानी धर्म के बिगड़े हुए रूप का बोध दिलाता है। धर्म का बिगड़े हुए रूप को इस प्रकार दिखाया है कि "सियासत से उपजी सड़ी व्यवस्था में वह दम नहीं तोड़ता है और ना ही रिश्तों के बदलते संदर्भो की मार खाता है और न ही अपने दायित्व को पहचानता और अपने अधिकारों के लिए लड़ता है।"[6] यहीं नहीं उनकी 'दरवाज़ा-ए-कजविन' कहानी में मुस्लिम स्त्रियों द्‌वारा भुगतनेवाली शोषण को अंकित किया गया है। इनकी विवाह संबंधी पद्धतियाँ भी अलग हैं। नासिरा शर्मा की 'बावली' कहानी मुस्लिम स्त्री की वैवाहिक जीवन में उत्पन्न त्रासदी का रेखांकन है। अब्दुल बिस्मिल्लाह की 'तलाक के बाद' कहानी में मुस्लिम परिवार में तलाक देने से स्त्री के समक्ष जो कठिनाईयाँ एवं परिस्थितियाँ आती हैं उसको उजागर किया गया है।

नासिरा शर्मा का 'गूंगा आसमान' कहानी में राजनैतिक व्यवस्था से पीड़ित नारी का चित्रण हुआ है। इसमें स्त्रियों पर होनेवाले अमानवीय अत्याचारों का चित्रण हुआ है। इसमें फ़र्शीद नाम के एक पुलिस अफसर है जो स्त्रियों पर अत्याचार एवं बलात्कार करता है और विरोध करनेवालों को जेल में डालता है। इतना ही नहीं मजबूर स्त्री को निकाह कर अपने घर में रखता है।इस तरह अनेक स्त्रियों से संबंध जोड़ता है। आखिर वह अपनी पत्नी मोहरगंज को औरतों का व्यापार करनेवाली औरत का आरोप लगाकर गिरफ्तारी का वारंट निकालता है। इसी कारणों से मोहरगंज को बदचलन औरत कहते हैं। वह इस संघर्ष, घुटन अपमान अंत तक सहती है। इस राजनैतिक व्यवस्था के कारण निरपराधी को सब कुछ भोगना पड़ता है।

इक्कीसवीं सदी तक आते मुस्लिम स्त्रियों में बदलाव आ गया है। उनकी सामाजिक एवं आर्थिक दशा का उल्लेख विभिन्न कहानीकारों द्वारा मिलता है उसमें मंजूर एहतेशाम की 'घेरा' और 'तमाशा' कहानियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इक्कीसवीं सदी की कहानियों की राजनीतिक दशा में असगर वजाहत का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनकी कहानियों में राजनीति सटीक व्यंग्य के साथ प्रस्तुत किया जाता है। 'वस्ताद जमूरा बदकही' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 'संगसार' एवं 'शामी कागज़' भी विशेष महत्व रखता है।

मुस्लिम समाज में नारी की स्थिति दयनीय है। पुरुष सत्तात्मकता से वे तंग आ चुकी है। शमोएल अहमद की कहानियों में मुस्लिम समुदाय में व्याप्त नारी शोषण पर चित्र

खींचा गया है। इस दृष्टि से उनकी कहानियाँ 'रंग', 'ऊँट', 'मृगतृष्णा', 'मित्री की डाली', 'बहराम का घर' आदि महत्वपूर्ण है। नसरीन बानो की 'बाबुल का द्वार' और जेबा रशीद की कहानी 'तपती रेत' नारी शोषण पर आधारित है। मेहरुन्निसा परवेज की 'पत्थरवाली गली में' नारी शोषण का भयानक चित्र को प्रस्तुत करते हुए ऐसा प्रसंग दिखाते है - "अब्बा शराब के नशे में अपने दोस्त से बोले -मेरी हर चीज़ में तुम्हारा हिस्सा है।यहां तक मेरी बीवी में भी।हम दिन बांट लेंगे,जब मैं बाहर रहूं तो तुम यहां रहो,जब तुम बाहर रहो तो मैं इसका साथ रहूंगा।अम्मा ने घबराकर अपनी आंखें भींच ली थी।"[7]

शमोएल अहमद की कहानियों में मुख्य रूप से नारी शोषण, सांप्रदायिकता, मजहब के आड़ में होनेवाले गलत कामों का उल्लेख हुआ है। मुस्लिम समाज में व्याप्त नारी शोषण पर आधारित कहानियों में 'बदलते रंग','ऊँट', 'मृगतृष्णा','मिश्री की डाली','बहराम का घर' आदि महत्वपूर्ण है।'बदलते रंग' शीर्षक कहानी वेश्या स्त्री पर आधारित है। 'ऊँट' कहानी में एक ऐसी स्त्री का चित्रण है, जो अधिक तंगी के कारण इम के हवस का शिकार बन जाती है। 'मृगतृष्णा' कहानी दम्पत्ति के बीच के टकराव को प्रस्तुत करती है। 'मिश्री की डाली' कहानी में मुस्लिम समाज में स्त्री शोषण को उकेरा गया है। इक्कीसवीं सदी की कहानियों में सांप्रदायिकता का चित्रण अनेक कहानियों में पाया जा सकता है। गीतांजलि श्री की 'आजकल' और नीला प्रसाद की 'एक दुनिया समांतर' गुजरात दंगे के मुस्लिम नारियों की जीवन गाथा दिखाती है।

इक्कीसवीं सदी की कहानियों में मुस्लिम स्त्रियों का धार्मिक जीवन प्रतिपाद करते हुए अनवर सुहैल की 'दहशतगर्द' कहानी एवं उनका विवाह संबंधी संघर्ष तथा मेहर संबंधी समस्याओं का चित्रण भी मिलता है। नासिरा शर्मा की 'खुदा की वापसी' इस दृष्टि से विशेष महत्व रखता है। इक्कीसवीं सदी के अनेक कहानियों में स्त्रियों के दमन और उनपर होनेवाले अत्याचारों के साथ - साथ उनकी हालातों से लड़ने की क्षमता और साहस को भी सशक्त अभिव्यक्ति दी गई है। वह अपने साथ हुए अन्याय से हार नहीं मानती बल्कि उसके खिलाफ लड़ती है। अपनी चुनौतियों का सामना करती है। हर मुसीबतों का सामना करने का प्रयास करती है।

संक्षिप्त रूप में कह सकते हैं कि हिंदी कहानीकारों ने अपनी कहानियों के द्वारा मुस्लिम जनजीवन के साथ ही मुस्लिम स्त्रियाँ और उनकी परिवेश को यथार्थपूर्ण ढंग से व्यक्त कर उनकी हर समस्या को विश्लेषित किया है। समाज की कठिन चुनौतियों एवं समस्याओं का सामना करके मुस्लिम स्त्रियों को उन्नति की ओर उजागर करने का प्रयास किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राष्ट्र और मुसलमान,नासिरा शर्मा, पृ.69
2. राष्ट्र और मुसलमान,नासिरा शर्मा,पृ. 92
3. आदाबे जिंदगी (अनु.) मौ.मुहम्मद यूसुफ इस्लाही, डॉ कैसर यजदानी नदवी, मर्कजी मकतबा इस्लामी पैब्लिकेशंस 2006 पृ.32
4. हिंदी उपन्यासों में मुस्लिम समाज : आलोचनात्मक अनुशीलन, डॉ.सिराज के बहोरा (बहोरा प्रकाशन, भोपाल; 2004) पृ.55
5. दूखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी, चतुरसेन शास्त्री, पृ.95
6. जहाँनुमा, नासिरा शर्मा, पृ.432
7. पत्थरवाली गली, मेहरुन्निसा परवेज़, पृ.70

शोधछात्रा, हिंदी विभाग
सरकारी वनिता कॉलेज,
तिरुवनंतपुरम

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री जीवन संघर्ष

डॉ सफीना एस ए

मैत्रेयी पुष्पा समकालीन महिला लेखन का एक मजबूत आधार है। उन्होंने सिर्फ मध्यवर्ग का ही नहीं बल्कि आदिवासी लोगों का जीवन भी करीब से देखा है। ग्रामीण जीवन मैत्रेयी का केंद्र बिंदु रहा। उनकी नारी चेतना मजबूत एवं संपन्न है। नारी जीवन की लगभग सभी समस्याओं को उजागर करने की कोशिश उन्होंने की है महिला लेखन के संदर्भ में मैत्रेयी का कहना है कि "नहीं सादी में स्त्री लेखन कहां खड़ा होगा, आलोचना के क्षेत्र में इस बात पर किसी ने गौर किया है? अब संदेश करने की जरूरत नहीं,स्त्री रचनाकारों ने बंधे -बंधाए दायरे तोड़कर अपनी रचना धर्मिता और अभिव्यक्तिको ऐसा स्वर दिया है जिसे अनसुना करना समीक्षा विधा के लिए कठिन पड़ेगा।" यानी मैत्रेयी पुष्पा ने अपने लेखन के ज़रिए नारी व्यक्तित्व को समाज में प्रतिष्ठा दिलाकर समाज में अपनी भूमिका निभाना चाहती है वह अपने कर्तव्यों के प्रति गंभीर भी है और सामाजिक नैतिक राजनीतिक जिम्मेदारियां को स्वीकारती भी है। मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों में नारी मन को मुख्य रूप से रखा है। नारी मन की सूक्ष्म भावाभिव्यक्ति उनकी कृतियों की पहचान है। नारी शरीर, नारी मन और नारी भावनाओं की अपनी विशेषता होती है जिसे उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है "उनकी रचनाओं में स्त्रियों के मुद्दे विशेषकर ग्रामीण स्त्रियों के मुद्दे केंद्रीय बने जो अब तक हाशिए पर पड़े हुए थे । स्त्री की अस्मिता से जुड़े सवालों को कथा साहित्य के परिदृश्य में लेखिका ने उठाया है। मैत्रेयी ने स्त्री के जन्म से लेकर बुढ़ापे तक की चर्चा करके उनके विविध उदाहरण देकर अपनी रचना में विविध पत्रों को निर्मित कर नारी प्रश्नों के बारे में विचार किया है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में भी नारी जगत के प्रश्नों को उजागर करने का प्रयास किया है उनका उपन्यास 'बेतवा बहती रही' संपूर्ण नारी जाति का प्रतिनिधित्व करता है। 'बेतवा बहती रही' इस शीर्षक से भी मैत्रेयी ने जो संपर्कता दिखाई है वह यह है कि नदी जिस प्रकार बहते हुए गंदगी को साफ करती हुई चलती है, आगे बढ़ती है। इस प्रकार स्त्री भी जीवन में दुखों का जो गलत विचार है उन्हें छोड़कर अच्छे विचारों के साथ आगे बढ़ती है। अपने इस उपन्यास में उन्होंने नारी को केंद्र में रखा। उर्वशी उपन्यास की प्रमुख पात्र है। उसके माध्यम से लेखिका भारतीय समाज में महिलाओं का क्या स्थान है उसे बयान करती है। 1997 में उनका उपन्यास 'चाक' प्रकाशित हुवा। 'चाक' उपन्यास में पुरुष प्रधान समाज में नारी का क्या स्थान है उसे दिखाया है। कृषक जीवन का यथार्थ चित्रण करने में यह उपन्यास कामयाब रहा। इस उपन्यास में अंतरपुर गांव में स्त्रियों के ऊपर होने वाले अत्याचार का भयावाह चित्रण है। पहली नजर में तो यह गांव बेहद शांत नजर आती है लेकिन जब व्यक्तियहाँ रहना शुरू करता है तो वह असली गांव से रूबरू हो जाता है। इस में स्त्री का विद्रोह है, दमन है, ईर्ष्या है इसलिए कहा गया है कि- "यह लड़ाई नारी मुक्ति या नारीवाद की सीमा नहीं बनती बल्कि यह लड़ाई मनुष्य के अधिकारों की लड़ाई है यह अपनी शक्तिको पहचानने की लड़ाई है यह भारत की ग्रामीण जमीन पर घुटन के भीतर देखती आंखों की लड़ाई है जो सड़ी गली मान्यताओं को भस्म कर देना चाहती है साथ ही नैतिकता के पाखंडों को तोड़ती हुई नैतिका की नयी जमीन बनाती नजर आती है।" इस उपन्यास की नायिका मर्यादा और संस्कारों की लहरों

को तोड़ती है, ऐसा करने से उसे अपने परिवार को दाव में रखना भी पड़ता है। उपन्यास में दहेज की समस्या,विधवा स्त्रियों के स्वावलंबन और अस्मिता की समस्या, विवाहोत्तर स्त्री पुरुष संबंधों से निर्मित समस्या आदि से संबंधित अनेक समस्याएँ उभरकर सामने आती है। उपन्यास में गरीब विधवा हरिप्यारी नाईन अपनी बेटी गुलकंदी के विवाह का दहेज देने में असमर्थ हो जाती है। माँ इस बात से चिंतित है कि कहीं बेटी की सगाई न टूट जाए इसलिए हरिप्यारी सारे लाज लिहाज घूंघट की परवाह न करते समधि से बात करने उसके गांव चली जाती है। परंतु समधि स्वयं बात न करते हुए दूसरे आदमी के जरिए कहलाता है कि- “20000 नगद नोट भिजवा दे और मन चाहे जहां भवर डालने रतनलाल की” लाख कोशिश करने के बाद भी हमारा समाज दहेज समस्या से मुक्त नहीं हो पाया है। आज भी मनुष्य आधुनिक होते हुए भी पुरानी रूढ़ियों से ग्रसित है। लेखिका ने इस उपन्यास में रेशम के ज़रिए विधवा जीवन की त्रासदी को भी प्रस्तुत किया है। इस तरह हम यह कह सकते हैं कि उपन्यास की संपूर्ण कथा स्त्री जीवन की व्यथा पर आधारित है। 1999 में प्रकाशित ‘झूला नट’ का वैचारिक पक्ष स्त्री विमर्श है। इस उपन्यास में ग्रामीण जीवन की समस्याओं को व्यक्त किया गया है। उपन्यास की नायिका शीलो गरीब परिवार से सुमेर की बहू बनकर आयी थी। लेकिन उसका पति उसे छोड़कर दूसरी शादी कर लेता है। 7 वर्ष तक शीलो और अनब्याही की तरह अपने पति के घर में रहती है। सुमेर की माँ की प्रेरणा से वह उसके छोटे भाई बालकिशन की बहू बन गई लेकिन उसकी पत्नी के रूप में शीलो को मानने के लिए गाँव में बछिया अनिवार्य है लेकिन उसके लिए शीलो तैयार नहीं थी इतने में बालकिशन का मन की संतुलितावास्था नष्ट हो जाता है और वह घर छोड़कर भाग जाता है। लेखिका ने इस उपन्यास में शीलो का प्रस्तुतीकरण एक विद्रोही नारी जैसे किया है। मैत्रेयी जी का एक और उपन्यास है ‘अल्मा कबूतरी’ यह उपन्यास हिंदी कथा जगत में मील का पत्थर माना जाता है। उपन्यास में औरतों और वंचित जनजातियों के संघर्ष को प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत उपन्यास का परिवेश कबूतर नामक अपराधी समझी जाने वाली जनजाति से संबंधित है। सभ्य समाज द्वारा इन जनजातियों पर किये जाने वाले ‘अत्याचार’ उपन्यास में दिखाया गया है। लेखिका ने इसमें कबूतर समाज के संपूर्ण जीवन संघर्ष की अभिव्यक्ति की है। 2000 में प्रकाशित उपन्यास ‘इदन्नमम’। मजदूर तथा किसानों की बेबसी कहने वाले इस उपन्यास में एक कुंवारी लड़की समाज व्यवस्था के खिलाफ किस प्रकार संघर्ष करती है उसका चित्रण है। इस उपन्यास के ज़रिये मैत्रेयी को एक उल्लेखनीय उपन्यासकार के रूप में ख्याति मिली और यह उपन्यास साहित्य जगत में काफी चर्चित भी रहा। यह उपन्यास शयामली और सोनपुरा नामक दो गांवों में होने वाली तीन पीढियों की बेहद सहज और संवेदनशील कहानी है। इस उपन्यास में आने वाले सभी नारी पात्र जैसे मंदा, प्रेम, बाउ, सुगुना, कुसुम आदि सब शोषण के शिकार होती है। मंदा जब तक शयमाली में थी तब तक एक साधारण गांव वाली लड़की जैसी थी लेकिन वर्षो बाद जब वह सोनपुरा लौट आयी तब से उसके चरित्र चित्रण में लेखिका अविश्वसनीय बदलाव लायी है। गोविंद सिंह द्वारा अपनी पूरी ज़मीन और जायदाद नष्ट होने पर भी वह रामायण,महाभारत बांचकर रोज़ाना चलती थी। अपने पिता के स्वप्न को हकीकत में बदलने के लिए गांव के अस्पताल में डॉक्टर लाने के लिए वह दिन रात परिश्रम करती है। फिर भी अस्पताल में डॉक्टर नहीं आया। गाँव में पक्के सड़क नहीं थे। एक पोस्ट ऑफिस नहीं था। हर दिन अखबार नहीं मिलता था । गाँव के चुनाव के समय मंदा के नेतृत्व में वोट बहिष्कार का आंदोलन चलाया गया तब राजा साहब डर कर जल्दी से डॉक्टर और एक

कंपाउंडर का इंतजाम करते हैं। अपने ग्राम वासियों की सुरक्षा के लिए वह मालिकों के विरुद्ध आंदोलन चलाती है। गांव में डॉक्टर लाने के लिए वह खूब परिश्रम करती है और अंत में उसे सफलता भी मिलती है। उपन्यास की नायिका मंदा के सामान विधवा बउ के चरित्र में भी लेखिका ने विद्रोह लाने की कोशिश की है। वह दूसरी जिंदगी स्वीकार नहीं करके अपने बेटे की देखभाल अकेली निभाती है। कुछ लोग द्वारा बेटे की हत्या हो जाने के बाद वह अपनी पोती मंदा को लेकर श्यामली चली जाती है। उपन्यास में मंदा के चरित्र गठन में में बउ का योगदान रहा है। इस उपन्यास में कुसुम भी एक विद्रोही नारी है। अपने पति यशपाल द्वारा अपेक्षित होने पर भी वह ससुराल में ही रहती है। अमर सिंह के साथ उसका संबंध भी रहता है। अमर सिंह तो मर जाता है लेकिन उसके बच्चे को वह पलटी है। कैलाश मास्टर जब मंदा का बलात्कार करता है तब वह मंदा को आगे जीने की हिम्मत देती है। इस तरह उपन्यास के सभी नारी पात्र बहुत ही सशक्तहै। 'अगनपाखी' उपन्यास मैत्रेयी जी का 'स्मृति दंश' नमक लघु उपन्यास का नया रूप हैं। इस उपन्यास में समाज में स्त्री शोषण किस तरह होता है उसे स्पष्ट किया है तो 'विज़न' उपन्यास (2002) में लेखिका ने स्त्री विमर्श का नया रूप उभारा है। इसमें भी नारी शोषण, संघर्ष और साहस-कथा है। 'कही ईसुरी फाग' में लेखिका ने लोक संस्कृति का गहरा अध्ययन कर लोक कवि ईसुरी के जीवन के रहस्ययों का उद्घाटन करने का प्रयास किया है 'कस्तूरी कुंडल बसे', 'गुड़िया भीतर गुड़िया' ये दोनों ही उनके आत्मकथानक उपन्यास हैं। 'गुनाह बे गुनाह' मैत्रेयी पुष्पा का 2011 में प्रकाशित उपन्यास है। उन्होंने इसमें हरियाणा पुलिस अकादमी में रहकर उनके अनुभव पाठकों को सामने साझा किया है। महिला पुलिस को कितने स्तरों पर संघर्ष करना पड़ता है घर समुदाय और समाज में उनका स्थान आदि स्त्री संघर्ष को उनके साथ रहकर लेखिका ने व्यक्त किया है। अपनी ग्रामीण महिला पात्र की सशक्त छवि को रचनाओं की दुनिया में उकेरने वाली मैत्रेयी पुष्पा ने 'नमस्ते समथर' उपन्यास में ग्रामीण और शहरी स्त्रियों के बीच भावना की एक डोर खींचा है। इस उपन्यास की नायिका कुंतल है। उसके मानसिक संघर्ष को इस उपन्यास में लेखिका ने उजागर किया है।

कुल मिलाकर कहा जाए तो लेखिका मैत्रेयी पुष्पा जी के लगभग सभी उपन्यासिक रचनाएँ नारी संघर्ष के स्पंदनों को आत्मसात करने में समर्थ हुई हैं। समाज में उपेक्षित, पीडति और हाशियेकृत लोगों को केंद्र में रखकर उन्होंने अपनी रचनाओं का प्रणयन किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मैत्रेयी पुष्पा- खुली खिड़कियाँ - पृ.165
2. डॉ. शोभा यशवंते- मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य में नारी जीवन - पृ.90
3. मैत्रेयी पुष्पा -चाक - पृ.115
4. वहीं - पृ.116

पोस्ट डॉक्टोरल रिसर्च फेलो

कुसाट

उपन्यास 'अस्थि फूल' और 'अन्हियारे तलछट में चमका' में स्त्री संघर्ष और सशक्तिकरण

रीना कुमारी राय

सारः यह अध्ययन भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति, उनके संघर्ष और पितृसत्ता के प्रभाव का ऐतिहासिक और समकालीन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वैदिक काल में सीमित स्वतंत्रता प्राप्त करने वाली स्त्रियों के अधिकार उत्तर वैदिक और स्मृति काल में पितृसत्तात्मक प्रतिबंधों के कारण समाप्त हो गए। भक्ति काल और समाज सुधार आंदोलनों ने स्त्रियों को अपनी अस्मिता और अधिकारों के लिए लड़ने की प्रेरणा दी, जहां राजा राममोहन राय, ज्योतिबा फुले और स्वामी दयानंद सरस्वती जैसे सुधारकों का योगदान उल्लेखनीय रहा। आधुनिक साहित्य, विशेषकर अल्पना मिश्र के उपन्यास 'अस्थि फूल' और 'अन्हियारे तलछट में चमका', ने इनारा, सुमन और मुन्नी जैसे पात्रों के माध्यम से स्त्री शोषण, यौन हिंसा और जातिगत भेदभाव की वास्तविकताओं को सामने रखा। ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा के अभाव ने विशेष रूप से दलित और आदिवासी स्त्रियों की स्थिति को और अधिक दयनीय बना दिया। यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि स्त्रियों की मुक्ति और सशक्तिकरण शिक्षा, आर्थिक प्रगति, और पितृसत्तात्मक विचारधारा के उन्मूलन के माध्यम से ही संभव है। यह शोध लैंगिक समानता और आधुनिक समाज में स्त्रियों की स्वतंत्रता की अनिवार्यता पर बल देता है।

मूल शब्दः पितृसत्ता, स्त्री शोषण, स्त्री सशक्तिकरण, लैंगिक समानता, आदिवासी स्त्रियाँ, दलित स्त्रियाँ, शिक्षा और सुरक्षा, यौन हिंसा, सामाजिक असमानता, जातिगत भेदभाव, भक्तिकाल, समकालीन स्त्री लेखन, संघर्ष और अस्मिता, भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा, सामाजिक पराधीनता

मूल आलेखः वैदिक काल में स्त्रियों को समाज में पुरुषों के समान अधिकार और स्वतंत्रता प्राप्त थी। वे शिक्षा, धर्म, और सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय भूमिका निभाती थीं। धार्मिक ग्रंथों और वैदिक साहित्य में उल्लेख मिलता है कि स्त्रियाँ विद्वान और सम्मानित होती थीं। हालांकि, इस काल में भी पितृसत्ता का प्रभाव आंशिक रूप से दिखाई देता है। उदाहरणस्वरूप, लोपामुद्रा और उर्वशी जैसी स्त्रियाँ पुत्र प्राप्ति और सौभाग्य के लिए देवताओं की प्रार्थना करती नजर आती हैं। यह बताता है कि उनकी इच्छाओं और कार्यो को समाज की मान्यताओं और परंपराओं के अधीन देखा जाता था। उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट शुरू हो गई। शिक्षा और धार्मिक अनुष्ठानों में उनकी भागीदारी धीरे-धीरे कम होने लगी। समाज में पितृसत्तात्मक सोच मजबूत होती गई, जिससे स्त्रियों के अधिकार और स्वतंत्रता पर अंकुश लगने लगा। इस समय के समाज ने स्त्रियों को मुख्य रूप से घर तक सीमित कर दिया। सामाजिक और शैक्षणिक क्षेत्र में उनकी उपस्थिति को खत्म किया जाने लगा। स्मृति काल में स्त्रियों पर और भी अधिक प्रतिबंध लगाए गए। मनु द्वारा बनाए गए नियमों ने स्त्रियों की स्वतंत्रता को पूरी तरह से समाप्त कर दिया। उन्हें अपनी इच्छाओं के अनुरूप कार्य करने का अधिकार नहीं था। उनके जीवन का हर निर्णय पुरुषों की आज्ञा और नियंत्रण के अधीन था। यह स्थिति इस बात का प्रतीक है कि समाज में स्त्रियों की स्वतंत्रता को एक तरह से समाप्त कर दिया गया था।

इस समय स्त्रियों का जीवन पूरी तरह से घर की चारदीवारी में सिमट गया। घरेलू कार्यो और परिवार की देखभाल ही उनकी मुख्य जिम्मेदारी बन गई। घर के अंदर भी उन्हें पुरुषों के अधीन रहना पड़ता था, और उनके साथ दासी जैसा व्यवहार किया जाता था। उनकी भावनाओं और इच्छाओं को कोई महत्व नहीं दिया जाता था। उन्हें केवल एक वस्तु के रूप में देखा जाने लगा, जिसका मुख्य उद्देश्य परिवार का पालन-पोषण करना और पुरुषों की सेवा करना था। स्मृति काल में समाज ने स्त्रियों की सामाजिक सहभागिता को लगभग समाप्त कर दिया। शिक्षा, स्वतंत्रता और समाज में उनकी भूमिका को शून्य कर दिया गया। इस पितृसत्तात्मक सोच के कारण स्त्रियों को शिक्षा और आत्मनिर्भरता से दूर रखा गया। उनके अधिकार छीन लिए गए, और उन्हें केवल पुरुषों की संपत्ति के रूप में देखा जाने लगा।

बुद्ध काल स्त्रियों के लिए सुधार और नए अवसरों का समय था। इस काल में महिलाओं को धार्मिक और सामाजिक स्तर पर अपनी पहचान बनाने का मौका मिला। सुत्तपिटक

के खुद्दक निकाय में लगभग सौ थेरी गाथाएँ संकलित की गई हैं, जिनमें विभिन्न वर्गों और परिस्थितियों से आई स्त्रियों की कहानियाँ दर्ज हैं। इन महिलाओं ने बौद्ध भिक्षुणी बनकर अपने जीवन की संवेदनाओं और अनुभवों को गाथाओं के रूप में प्रस्तुत किया। पति द्वारा त्यागी गई या अपमानित महिलाओं ने संन्यास जीवन का चयन किया और बौद्ध धर्म के माध्यम से आत्म-सम्मान और मानसिक शांति प्राप्त की। बुद्ध काल की यह विशेषता थी कि महिलाओं को न केवल सामाजिक बंधनों से मुक्ति मिली, बल्कि उनके लिए आध्यात्मिक और धार्मिक क्षेत्र में योगदान करने के दरवाजे भी खुले। यह उन्हें समाज में उपेक्षित और अपमानित जीवन से उपर उठने का साधन प्रदान करता था।

भक्तिकाल में भी महिलाओं की स्थिति में बदलाव देखने को मिलता है। इस काल में दक्षिण भारत की अंडाल और राजस्थान की मीरा जैसी संत कवयित्रियों ने अपने काव्य और भक्तिके माध्यम से अपने अनुभवों को अभिव्यक्त किया। समाज द्वारा अपमानित और प्रताडति इन महिलाओं ने ईश्वर के प्रति अपनी अटूट भक्ति के माध्यम से अपने दुख और संवेदनाओं को व्यक्तकिया। समाज की कठोरताओं और तिरस्कार से विक्षुब्ध होकर उन्होंने भगवान से मुक्ति की प्रार्थना की। उनकी रचनाएँ और भक्ति ने उन्हें समाज में एक विशेष स्थान दिलाया।

नवजागरण काल में स्त्रियों की स्थिति सुधारने के लिए कई महान समाज सुधारक सामने आए। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के उन्मूलन का मार्ग प्रशस्त किया और महिलाओं को उनके अधिकार दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ज्योतिबा फुले और उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले ने महिला शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए कठोर परिश्रम किया। इसके साथ ही, पंडिता रमाबाई ने महिलाओं के अधिकारों और शिक्षा के लिए जागरूकता फैलाई। ई. वी. रामासामी पेरियार ने महिलाओं के अधिकारों के लिए संघर्ष किया और पितृसत्तात्मक समाज में बदलाव लाने की कोशिश की। उन्होंने महिलाओं की समानता के लिए कई प्रयास किए। स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी महिलाओं की शिक्षा और स्वतंत्रता पर जोर दिया और वैदिक परंपराओं के आधार पर स्त्रियों को अधिकार और सम्मान देने की वकालत की। इन सुधारकों ने महिलाओं के अधिकारों, शिक्षा, और स्वतंत्रता के लिए अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए।

अल्पना मिश्र वर्तमान समय की एक सशक्तऔर प्रखर लेखिका हैं, जो अपने समय और समाज के यथार्थ से गहरे संवाद करती हैं। उनके उपन्यासों का मुख्य केंद्र स्त्री जीवन और उनके संघर्ष हैं। उनकी रचनाओं में पितृसत्ता के विरोध में खड़ी हुई संघर्षशील स्त्रियों के साथ-साथ पितृसत्ता के दमनकारी रवैये से विवश होकर पीड़ा झेलने वाली महिलाओं का चित्रण बखूबी मिलता है।

झारखंड और हरियाणा की पृष्ठभूमि पर आधारित उनका उपन्यास 'अस्थि फूल' स्त्रियों के जीवन के कठिन यथार्थ को उजागर करता है। इस उपन्यास में उन स्त्रियों की कहानी कही गई है, जिनका जीवन पितृसत्ता की चपेट में है। इन स्त्रियों के पास अपने शरीर और गर्भ पर कोई अधिकार नहीं है, जैसे आदिवासियों का उनके जंगलों और प्राकृतिक संसाधनों पर कोई अधिकार नहीं बचा। उपन्यास में सुंदरी, इनारा, पलाश, संतोष, और दीपा जैसे पात्रों के माध्यम से अल्पना मिश्र ने स्त्रियों के निर्मम शोषण और दोहन को सामने रखा है। इस उपन्यास में प्रकृति और मनुष्य के रिश्ते को भी संवेदनशीलता से दर्शाया गया है। यह दिखाया गया है कि मनुष्य केवल प्रकृति के साथ साहचर्य बनाकर ही अपनी मानवता को बचा सकता है। इनारा के जीवन की त्रासदी को लेखिका ने वनचंपा के फूल के प्रतीक के माध्यम से व्यक्त किया है। शादी के बाद जब इनारा अपने पति के साथ शहर आती है, तो उसके कान से वनचंपा का फूल गिर जाता है। यह दृश्य इस बात का संकेत देता है कि अब उसके जीवन से खुशियाँ छिन गई हैं।

इनारा का जीवन पितृसत्तात्मक शोषण का प्रतीक बनकर सामने आता है। उसके पति के साथ-साथ उसके चार देवर भी उसका यौन शोषण करते हैं। इस त्रासदी को महसूस करते हुए संतोष इनारा से कहती हैः 'बाभी, तू समझै है कि मुझे पता नहीं होवै। ये वही धरती है, पांडवों बाली फर्क इत्ता सा आया है कि तब अर्जुन जीतकर लाया था द्रौपदि को और सब भाइयों ने बाँट ली थी। अब खरीदकर लावै है और बांट लेवै हैं।"[1]

वर्तमान समय में भी महिलाओं की खरीद-फरोख्त और शोषण की घटनाएँ आम हो गई हैं। कई बार उन्हें वेश्यावृत्ति की ओर धकेल दिया जाता है। इसके अलावा, स्कूल जाती हुई छात्राओं के अपहरण और दुष्कर्म जैसी घटनाएं या उनका लापता हो जाना, समाज की क्रूर वास्तविकता

को उजागर करता है। हमारे समाज में कई ऐसी इनारा मौजूद हैं, जिन्हें ब्याह कर बेटी की तरह ले जाने का वादा किया जाता है, लेकिन बाद में उनका शोषण उनके ही ससुराल वाले करते हैं। इनारा के जीवन की यह कहानी उन सभी महिलाओं की कहानी है, जिन्हें उनके अपने ही रिश्तेदारों द्वारा तरह-तरह के शोषण और अत्याचार का सामना करना पड़ता है।

भारतीय समाज पितृसत्तात्मक संरचना पर आधारित है, जहां पुरुषों का वर्चस्व हर स्तर पर दिखाई देता है। इस व्यवस्था का सबसे क्रूर पक्ष मादा भ्रूण हत्या है, जो मानवता को झकझोर कर रख देती है। बेटियां आज हर क्षेत्र में सफलता की नई ऊँचाइयों को छू रही हैं, शिक्षिका से लेकर राष्ट्रपति पद तक पहुँच चुकी हैं। इसके बावजूद समाज बेटियों को जन्म से ही बोझ मानता आया है। बचपन से उन्हें 'पराया धन' समझा जाता है। मादा भ्रूण हत्या के पीछे प्रमुख कारणों में दहेज प्रथा शामिल है। लड़की के जन्म लेते ही माता-पिता को उसकी शादी के लिए धन जुटाने और समाज में उसकी सुरक्षा की चिंता सताने लगती है। इन चिंताओं से बचने के लिए कई बार बेटियों को जन्म से पहले ही मार दिया जाता है। अल्पना मिश्र ने अपने उपन्यास 'अस्थि फूल' में मादा भ्रूण हत्या के अमानवीय स्वरूप को बेहद संवेदनशील तरीके से व्यक्त किया है। वे लिखती हैं: "ये चीटियाँ नहीं पृथ्वी पर फैले मादा भ्रूण के आँसू है, जो चीख रहे हैं- बिना आवाज, बिना आँखों, बिना आँसू?"[2]

ग्रामीण समाज में पुरुष वर्चस्ववादी मानसिकता स्त्रियों के हर काम पर बंधन लगाना चाहती है। पुरुषों के मन में महिलाओं को लेकर अनेक शंकाएँ और पूर्वाग्रह रहते हैं। वे स्वयं अपने मन मुताबिक जीवन जीते हैं, लेकिन महिलाओं के जीवन पर कठोर प्रतिबंध लगाते हैं। इस संदर्भ में, पुरुषों का दोहरा रवैया साफ तौर पर दिखता है। जब सुरजू अपनी पत्नी से कहता है: 'साली! गाली देती है। तुम ठेकेदार के आदमी के साथ जाती हो हम देखते नहीं क्या?"[3] यह वाक्य समाज में पुरुषों की मानसिकता को उजागर करता है, जहाँ महिलाओं के हर कार्य पर सवाल उठाए जाते हैं। गाँव से शहर में काम की तलाश में आई महिलाओं की स्थिति और भी खराब है। मुन्नी जैसी महिलाएँ, जो आर्थिक मजबूरी के कारण शहरों का रुख करती हैं, वहाँ शारीरिक और मानसिक शोषण का सामना करती हैं। अल्पना मिश्र ने अपने लेखन में इस दर्दनाक स्थिति को बेहद मार्मिकता के साथ व्यक्तकिया है। मुन्नी का संघर्ष इस बात का उदाहरण है कि कैसे असुरक्षा और शोषण का चक्र महिलाओं को लगातार दबाता रहता है।

मुन्नी, जो दिन भर के संघर्ष के बाद एक पार्क में बैठकर अपने जीवन की यातनाओं को याद कर रही होती है, समय का ध्यान ही नहीं रख पाती। शाम हो जाने पर गार्ड, जो समाज में सुरक्षा का प्रतीक माना जाता है, उससे बात करता है और मदद का झूठा आश्वासन देता है। यह आश्वासन मुन्नी को भावनात्मक रूप से जोड़ देता है, लेकिन जब गार्ड उसे अपने कमरे पर ले जाता है, तो उसकी असलियत सामने आती है। गार्ड मुन्नी का विश्वास तोड़कर उसका शोषण करता है। लेखिका इस परिस्थिति को बहुत ही मार्मिक तरीके से व्यक्त करती हैं: "वासना के अजगर ने वात्सल्य को निगल लिया...."[4] मुन्नी की यह कहानी उन तमाम महिलाओं के संघर्ष और पीड़ा को दर्शाती है, जो शहरों में रोजगार के लिए आती हैं लेकिन उनके हिस्से में केवल शोषण और अपमान आता है। ग्रामीण और शहरी, दोनों ही परिवेश में महिलाओं की स्थिति पर ये घटनाएँ सवाल खड़े करती हैं, जिन्हें लेखिका ने अपने लेखन में गहराई से उकेरा है।

'अन्हियारे तलछट में चमका' उपन्यास में स्त्री जीवन के जटिल पहलुओं और समाज में पितृसत्तात्मक सोच के कारण उनके अनुभवों को उभारा गया है। इस उपन्यास में नाम के प्रति स्त्रियों की पहचान की खोज, अंतर्जातीय विवाह से उत्पन्न सामाजिक समस्याएँ, और पति द्वारा प्रताड़ना जैसे मुद्दों को प्रमुखता से उठाया गया है।

सुमन, जिसे उसके ससुराल में 'मुन्ना बो' कहकर संबोधित किया जाता है, उपन्यास की एक महत्वपूर्ण पात्र है। पितृसत्ता का सबसे क्रूर पहलू यही है कि वह महिलाओं को धीरे-धीरे उनके अधिकारों से वंचित करता है, और यह प्रक्रिया इतनी सूक्ष्म होती है कि महिलाएँ इसे सामान्य मानकर स्वीकार कर लेती हैं। सुमन भी इस स्थिति को सहज रूप से स्वीकार करती है। इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता का कथन उपन्यास के विचारों को और अधिक स्पष्ट करता है: "मैं स्त्री हूँ। मेरा नाम क्या है, मुझे नहीं मालूम। दरअसल दुनियां में कोई भी स्त्री अपना नाम नहीं जानती, क्योंकि प्रायः स्त्रियों को किसी नाम से सम्बोधित नहीं किया जाता। वह रिश्तों के नाम से जानी जाती हैं या फिर भौगोलिक दायरों के नाम से। यह भी कह सकते हैं,

उनको नाम ही नहीं दिया गया, एक साजिश के तहत।"[5]

मुन्ना और सुमन ने अंतर्जातीय विवाह किया था, लेकिन समाज में जाति का बोलबाला उनके संबंधों को सहज रूप से स्वीकार नहीं करता। मुन्ना बो की जाति 'कहारिन' है, और इसे लेकर उनकी चचिया सास की टिप्पणी समाज में जाति आधारित मानसिकता को उजागर करती है। चचिया सास कहती है: 'कहारिन है बिट्टो। समझाओ, बच के रहें। अब तक तिवारी खानदान में कोई कहारिन न लाया है। लड़कियाँ मर गई हैं क्या बाभनों में? हजार लड़कियाँ हैं, एक गयी तो सौ मिलि है। बोलो।"[6] यह कथन भारतीय समाज में जाति के आधार पर बनाए गए भेदभाव और पूर्वाग्रह को स्पष्ट करता है, जहां प्रेम और रिश्तों की अहमियत जाति के सामने नगण्य हो जाती है।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अधीन, महिलाओं की पहचान अक्सर उनके रिश्तों और भूमिकाओं तक सीमित कर दी जाती है। उपन्यास में यह भी दिखाया गया है कि स्त्री के अधिकार और उसकी स्वतंत्रता को पुरुष समाज कैसे नियंत्रित करता है। सुमन का संघर्ष इस बात का उदाहरण है कि पितृसत्ता महिलाओं को उनके मानवीय अस्तित्व और स्वाभाविक अधिकारों से कैसे वंचित करती है। मुन्ना बो जब समाज और पति की प्रताड़ना से तंग आ जाती है, तो वह एक अनजान दिशा में निकल पड़ती है। यह उसका प्रतिरोध है, जो पितृसत्ता और सामाजिक बंधनों के खिलाफ उसकी असहमति को दर्शाता है। उपन्यास के अन्य पात्र, जैसे इनारा और पलाश, भी शोषण का शिकार होते हुए बिखर जाते हैं। लेखिका इस बात को बखूबी दिखाती हैं कि जब तक समाज अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर महिलाओं को उनके अधिकार नहीं देता, तब तक वे समानता और स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकतीं। स्त्री चिंतन का यह मुख्य बिंदु है कि उन्हें वस्तु के रूप में नहीं, बल्कि इंसान के रूप में देखा जाए। उनमें भी वही संवेदनाएं और इच्छाएँ हैं, जो पुरुषों में होती हैं। उपन्यास की यह सोच और पितृसत्ता के प्रति इसका विरोध समाज में बदलाव की आवश्यकता पर बल देता है।

निष्कर्ष : यह अध्ययन भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति, उनके संघर्ष और पितृसत्ता के प्रभाव की ऐतिहासिक और समकालीन पड़ताल करता है। वैदिक काल से लेकर वर्तमान समय तक, स्त्रियों ने सामाजिक अन्याय और दमन के खिलाफ अपनी आवाज उठाई है। वैदिक काल में उन्हें सीमित स्वतंत्रता प्राप्त थी, लेकिन उत्तर वैदिक काल और स्मृति युग में उनके अधिकारों पर पितृसत्तात्मक प्रतिबंध और कड़े हो गए। समाज सुधार आंदोलनों के दौरान महिलाओं के अधिकारों के लिए कई प्रयास किए गए, जो उनके जीवन में सकारात्मक बदलाव लाने की दिशा में महत्वपूर्ण थे। भक्तिकाल और सुधार काल में महिलाओं की पीड़ा, उनके आत्मिक संघर्ष और मुक्ति की चाह साहित्य और आंदोलनों के माध्यम से अभिव्यक्त हुई।

इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि महिलाओं की समस्याएं न केवल उनके व्यक्तिगत जीवन तक सीमित हैं, बल्कि यह सामाजिक ढांचे की गहरी समस्या है। शिक्षा, स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता के प्रति बढ़ती चेतना ने महिलाओं को सशक्त किया है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक और आर्थिक विषमताएँ आज भी बनी हुई हैं। लेखिकाओं और समाज सुधारकों का प्रयास महिलाओं को उनके अधिकार दिलाने और पितृसत्तात्मक सोच को चुनौती देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का रहा है। अंततः यह अध्ययन पितृसत्ता के प्रति प्रतिरोध, स्त्रियों के संघर्ष और उनके अधिकारों की बहाली की दिशा में साहित्य और समाज सुधार कार्यों के योगदान को उजागर करता है। यह स्पष्ट करता है कि महिलाओं की मुक्ति का मार्ग उनके सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सशक्तिकरण से होकर ही संभव है।

संदर्भ

1. मिश्र, अल्पना, अस्थि फूल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2019, पृष्ठ संख्या 205
2. वहीं से, पृष्ठ संख्या 184
3. मिश्र, अल्पना, अस्थि फूल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2019, पृष्ठ संख्या 37
4. मिश्र, अल्पना, अस्थि फूल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2019, पृष्ठ संख्या 99
5. गुप्ता, रमणिका, स्त्री मुक्ति संघर्ष और इतिहास, सामयिक पेपर बैक्स, नई दिल्ली, संस्करण 2022, पृष्ठ संख्या 15
6. मिश्र, अल्पना, अन्हियारे तलछट में चमका, आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा, संस्करण 2014, पृष्ठ संख्या 20

शोधार्थी, हिंदी विभाग
नागालैंड विश्वविद्यालय

समकालीन कहानियों में पुरुष वर्चस्विता एवं स्त्री : कुछ और आयाम

डॉ जोयिस टॉम

भारत के उत्तर-पूर्व राज्यों से आजकल जो डरावनी खबर निकल रही है, काफी निराशाजनक है-विशेष रूप से औरतों के उपर की गई ज़्यादतियों की खबरें। ये केवल समाचार नहीं हैं, पुरुष वर्चस्विता के पैरों तले रौंदी गई अधुनातन भारतीय नारी की सच्चाई है। समकालीन भारतीय समाज चाहे जितना भी अर्वाचीन कहा जाए, समकालीन भारतीय नारी चाहे जितनी भी सचेत कही जाए प्राचीन पुरुष वर्चस्विता की चंगुल से औरत की मुक्ति अब भी काफी दूर दिखती है। परिवर्तन केवल कानून बनाने से संभव नहीं है। असल परिवर्तन तब होता है जब सुधार व्यक्ति के भीतर होता है। सामाजिक उथल-पुथल में वही काम आता है। भारत का प्रत्येक पुरुष यह पहचाने कि वह केवल एक नागरिक है। जैसा औरत वैसा मर्द। उसके अलावा औरत के ऊपर उसका कोई विशेष अधिकार नहीं है। चाहे पति हो या पिता, मित्र हो सहकर्मी हो या जीवन साथी, अधिकारी हो या सत्ताधारी, पुरुष केवल एक नागरिक है। वैधानिक अधिकारों और दायित्वों से युक्त और सीमित एक अदना नागरिक। बस इतना ही है पुरुष; स्त्री भी। लेकिन वह भारतीय समाज अब भी दूर दिखता है।

मणिपूर में औरतों को दंगा फसादियों के सामने बलात्कार के लिए फेंका गया था। इस नृशंसता को अंजाम देते हुए उन औरतों ने क्या सोचा होगा? फर्क सिर्फ इतना था कि वे दोनों औरतें, जिनका सामूहिक बलात्कार हुआ था,अन्य जाति की थीं । भारत जैसे बहु सांस्कृतिक समाज में अलग-अलग स्वत्व सीमाओं में पलती औरत स्वयं अन्य औरतों का शिकार करती है तो वह कोई अतिरंजित यथार्थ नहीं है। ये वारदातें मनुष्य की विकास यात्रा के प्रारंभिक दौर में विभिन्न जातियों और कुनबों के बीच घटित लड़ाइयों के समान ही हैं। यानी भारतीय समाज में बहुतेरे लोगों की विकास यात्रा अब भी शैशव-दशा में ही है। नवजागरण एवं आधुनिकता बोध अब भी बहुतों की पहुँच के बाहर हैं।

शंकित हूँ कि साहित्य में स्त्री-जीवन को ढूँढने और परखने से कोई सामाजिक बदलाव संभव है या नहीं मगर सामाजिक सुधार की अश्रांत कोशिश साहित्य जगत में जारी है। इस आलेख में समकालीन हिन्दी कहानी में चित्रित निम्न स्तरीय नारियों के जीवन संघर्ष तथा उनकी प्रतिक्रियाओं को एकत्रित किया गया है जो पुरुष वर्चस्विता से लड़ती है। इन स्त्रियों के लिए पहचान का मतलब सिर्फ जीना ही है और उनका जीवन एक फैला हुआ संघर्ष है। इन औरतों की ज़िन्दगी मानो दुधारी तलवार की चोट है, एक तरफ ज़िन्दगी की मार तो दूसरी तरफ पहचान की वार। पति देव को तो मारने का अधिकार परंपरा सिद्ध है। औरतें अक्सर सोचा करती थीं कि 'मरद अगर लुगाई को मारकर वश में न करें तो मरद काहे का।' शिवमूर्ति की 'सिरी उपमा जोग' कहानी में एक पति परायण औरत का चित्रण है । वह औरत अपने होशियार पति को पढ़ाकर ऐ. ए. एस. कराती है। वह स्वयं पति की खेती संभालती है, और अपने साथिनों की मुख से ताने भी सुनती रहती है जैसे- "खुद ढोयेगी गोबर और भतार को बनायेगी कप्तान"[1] पति तो बन जाता है आखिर कलक्टर लेकिन वह औरत कहीं की नहीं रह जाती है। पति के कलेक्टर बन जाने से मामला बिगड़ती है। अब पति-पत्नी के बीच सांस्कृतिक, शैक्षिक, सामाजिक जैसे कई तरह के अंतर आते हैं और अंत में वह भोली-भाली औरत खुद को पति के लिये अयोग्य मानने लगती है । वह पति को सलाह-मशविरा करती है - "फिर आप शादी क्यों नहीं कर लेते वहीं किसी पढ़ी-लिखी लड़की से, मैं तो शहर में रहने लायक नहीं रह गयी हूँ"[2] पति का उद्धार तो वह औरत कर पायी मगर स्वयं पति देव की नज़रों में गिरती चली गयी। उसको सतह पर लाने की ज़रूरत पति ने भी नहीं समझा। नतीजतन अंतर बढ़ता है और पति-देव बेशक दूसरी शादी करता है। वह हमेशा के लिए शहर चला जाता है। उस औरत को कोई मनुहार देना भी उस पति को जायज नहीं लगता - "वे इस बार कोई आश्वासन नहीं दे पाये थे। उसका रोना-धोना उसे काफी अन्य मनस्क कर रहा था। वे उकताये हुए से थे। अगले दिन ही वे वापस जाने को तैयार हुए थे। घर से निकलने लगे तो वह आधे घण्टे तक पांव पकड़कर रोती रही थी। फिर लड़की को पैरों पर झुकाया था।

नन्हे लालू को पैरों पर लिटा दिया था, जैसे सब कुछ लूट गया हो, ऐसी लग रही थी वह दीन, हीन, मलिन"[3] वह पति के खिलाफ एक लफ्ज़ भी बोल नहीं पाती।

शिवमूर्ति की 'भरतनाट्यम' कहानी की पत्नी का संघर्ष वाकई एक बेटा पाने के लिये है ताकि अपने परिवार में बेटे को जन्म देने वाली माँ का सम्मान हासिल करें। घर में उसका पति, न उसकी सुनता है और न उसकी ज़रूरतों पर ध्यान देता है। पति की उपेक्षा भरी अन्दाज़ के खिलाफ उस औरत की प्रतिक्रिया काफी दिलचस्प है। वह औरत लड़के को पाने की कामना में पहले अपने जेठ को ही अपने कमरे बुलाती है और उसके बाद शहर के किसी दर्जी के साथ भाग जाती है। उस औरत को पुरुष मेधा समाज का शिकार कहने में कोई आपत्ति नहीं है। चाहे पति हो या पुत्र उस स्त्री को अपनी ज़िंदगी पुरुष के बिना अधूरी लगती है। पुरुष केंद्रित समाज ने उसे वही सबक सिखाया है।

संजीव की 'अंतराल' कहानी में पति देव की बुतपरस्ती पर एक औरत की प्रतिक्रिया इस तरह है "हूँ बहादुरी आयी मगर देर से! एक पौधे को कितनी बार उघाड़कर रोपेगा? उसकी भी जडें होती है कि नहीं"[4] बरसों के बाद किसी मेले में अपने बाल-ब्याहे पति को पाकर माधवी इस तरह पूछ बैठती है। उसका बाल-ब्याहा तो घरवालों की खातिर पुतली नाच कर किसी गैर की गृहस्थी संभाल रहा था। माधवी को भी किसी बेमेल शादी में बंधनी पड़ी थी। अब 'मनोज का बापु' उसे दोबारा पाना चाहता है तो वह साफ मना करती है, मानो वह कोई रंडी वगैरह नहीं जो पत्ते के अनुसार थिरकती है। माधवी समस्या को समझती है। पुरुष की कामचलाउ नीति से भी वाकिफ है। साफ इनकार करती है-"सब कुछ छोड़कर कैसे चल दूँ तुम्हारे साथ औरों ने क्या अपराध किया है कि उनको हमरी सज़ा मिले? यह सब किसका कसूर है मनोज के बापु, हम गरीब गँवार लोग... हमारी ज़िन्दगी भी क्या है। कच्ची उमिर में भी जोत दिये गये गोरू की तरह.....पचासों डर पाले एक दूसरे से लड़ते हुए.....ऊपर से बिरादरी का बरगत-टोह-ही-टोह! चेतन के पहले ही उसके नागपाश में जा अटके, अब दूसरी भूल यह कैसे करें कि कायरों की तरह सब को उसी हालत में छोड़कर भाग चले। जो भूल हुई सो हुई, अब से भूल न हो ताकि बच्चे तो बचे रहे । माधवी 'भारतनाट्यम' की पत्नी की तरह नहीं है जिसने पुरुष को (बेटे को) पाने के लिए एक पुरुष को छोड़ा, दूसरे पुरुष को स्वीकारा और तीसरे के साथ भाग निकला। माधवी पुरुष को दोषी नहीं मानती। उसे भी सामाजिक कुरीतियों का शिकार मानती है । उस औरत का त्यक्तजीवन आगामी पीढ़ी को समर्पित है। वह निर्णय स्वयं ले पाती है। माधवी सचेत है और अन्य कहानियों में आई स्त्री पात्रों की तुलना में उसका अपना नाम है; न वह, न बहू, न पत्नी, 'अंतराल' कहानी की स्त्री माधवी की संज्ञा से अभिहित है। पुरुष मेधा समाज में वाकई पुरुष स्त्री को अपना अधीन कराना चाहता है। नारी का सर उठाना वह नहीं सह सकता ।उसे रोकने के लिए मार-पीट से लेकर वाक-बाण तक का प्रयोग वह करता है। 'जसी-बहू' कहानी में औरत की आत्म परायणता को टोकते पुरुष समाज को हमने देखा। संजीव की 'माँ' कहानी की माँ भी इन्हीं हालातों से गुज़रती है। पति ने गैर के साथ रिश्ता जोड़ने की कोशिश की। इस वजह से माँ ने उसे अपने से अलग किया है। पुश्तैनी खेती वह औरत अकेले संभालती है। हालांकि दादा-देवर, भांजे-भतीजे, बेटे-बेटियों के हिस्से की उपज वह बांट-बांटकर देती है। बिना कोई मेहनत, वे बन जाते हैं मालामाल मगर उस औरत की आत्मनिर्भरता-पुरुष के रहते औरत की आत्म परायणता-उन्हें अखरती है। वे बीच-बीच में उसे टोकते हैं। 'हलवाहे' के साथ अनैतिक संबंध ठहराकर उसे समाज में अकेला कर देते हैं। अकेले लड़ती-घटती वह गैंग्रीन की मरीज़ हो जाती है और उसके दोनों हाथ-पैर काट दिये जाते हैं। लेकिन मौत भी उसे हरा नहीं पाती। श्मशान तो उसके लिये कोई मुकाम थी ही नहीं, बल्कि सिलसिलेवार ज़िन्दगी ही थी- "श्मशान कुछ और नहीं होता यह ज़िन्दगी ही श्मशान है। जनते ही मौत की तरह हमें कातने लगती है, कगार गिरते रहते हैं, कभी अरराकर, कभी चुपचाप, आवाज़ तक नहीं होती। मौत और श्मशान कोई एक मुकाम नहीं फैला हुआ सिलसिला है।"[5] मौत से वह क्या हारी। पुरुष मेधा के छूटे आरोप ही उससे हारती है। जिसे जो कहना है, हमसे कहे, सामने पीठ पीछे नहीं मृत्यु की शय्या पर भी अफवाहों का मुंह बांधती उस औरत का आत्मबल सराहनीय है। वह पति-बेटे और अन्य सभी पुरुषों को,समूचे पुरुष मेधा समाज को हतप्रभ करती है। नमिता सिंह की 'दर्द' कहानी में एक माँ-मज़दूरिन का चित्रण है जो पुरुष वर्चस्विता के खिलाफ आवाज़ उठाती है। समाज में पुरुष चाहे कुछ भी कर सकता है। वही काम अगर स्त्री करें तो अपराध माना जाता है। बेड़ियाँ हर कहीं नारी पर लगी हैं। कहानी में 'रमिया' की बेटी 'सुन्नरी' की शादी कायदे

के अनुसार बिरादरी में ही की जाती है। जबकि सुन्नरी का पति अपनी भाभी पर ही अटका हुआ है। उसको सुन्नरी की गैर हाज़िरी ही ज्यादा पसंद है। तनाव में आकर सुन्नरी किसी गैर बिरादरी के साथ भाग चली जाती है। अब बिरादरी का कानून भंग हो गया है तो उसकी सज़ा 'रमिया' को ही मिलती है। बिरादरी की यही नीति है जानो 'गधा खेत खाय और जुलाहा मार खाय' । सवाल आखिर इज्जत पर लगती है तो रमिया के बेटे को अपनी माँ, माँ नहीं बल्कि डायन लगता है। लेकिन रमिया का मुँह वे बन्द नहीं कर पा रहे हैं- "तू भी (पति) आज बहुत इज्जतदार हो गया है । उँची जात वाला बन गया है ......तू मुझे कौन सा ब्याह कर लाया था। मेरे शराबी बाप तो बेचे जा रहा था मुझे। तू मुझे बचाकर लाया। मैं समझी थी कि देवता मिल गया मुझे। भगवान की तरह ज़िन्दगी दी मुझे। अरे तब कोई हमारी जान लेने आया? तब किसी ने गोली पार की हमारे? और ये औलादें मेरी जान ले लेंगी। साँप पाले मैं ने अपनी कोख में ...ज़हरीले साँप"[6] इसी बिरादरी के उसूलों की बात बताने वालों से वह पूछती है - "वाह! वाह! क्या न्याय है, धन्य हो । तुम चमार की लौंडिया भगा लाओ तो सब ठीक । बहुत बड़ा काम, तुम्हारी लौंडिया किसी के साथ चली जाए तो बहुत गलत, पाप, क्या न्याय है वह..."[7] पुरुष और नारी के बीच सामाजिक भेदभाव 'रमिया' नहीं मानती। पुरुष वर्चस्विता के कायदे कानून वह ठुकरा देती है। वह माँ है,पत्नी है मगर उसका एक नाम है-रमिया।

उषा महाजन की 'सच तो यह है' कहानी की रूनू आर्थिक स्वावलंबन के लिये अपने पति से लड़ती है। अपनी मेहनत की कमाई से वह बच्चों को किसी अच्छे से अच्छे संस्था में पढ़ाना चाहती है जबकि उसका पति रूनू की कमाई को मौज-मस्ती में उड़ाना ज़्यादा पसंद करता है। वह औरत आखिर अपनी मालकिन की मदद से बैंक में बचत खाता खोलती है, ताकि उसकी कमाई उसके अलावा कोई और न हाथ लगा पाये। आर्थिक स्वतंत्रता औरत के लिए कितना ज़रूरी है, रूनू जानती है।

वह अपने दुकान में बिना वेतन काम कराने के उद्देश्य में एक औरत को ब्याह लाता है। औरत के आने में उसे मुनाफा ही दिखता है - "लुगाई का आना कोई घाटे का सौदा नहीं होगा। आने वाली पूरी काम संभालेगी । खाना पकाने से लेकर बरतन की सफाई तक। न तनख्वाह की चिक-चिक न काम की झिक-झिक। सिर्फ खाना और कपड़ा तक मामला रहेगा। औरत से जो बाकी आराम होते हैं सो अलग। उसकी वजह ग्राहक भी बढ़ेंगे।"[8] रामलाल के लिये स्त्री मशीन से ज्यादा कुछ नहीं है, जो 'खाना कपड़े के तेल' डालने पर सारा काम संभालती है। अच्छा खासा मुनाफे का गणित। मगर 'लुगाई' के आने पर उसका सारा गणित गलत सिद्ध होता है। वह औरत जितना काम करना जानती है, उतना हक जताना भी जानती है। एक दिन एक बड़ी गिलास में चाय पीते हुए रामलाल उसे टोकता है। उसे पीटने के लिये वह डंडा ले आता है, जिससे वह सभी को पीटा करता था। मगर इस बार उसने शेरनी से भिड़ा था। 'लुगाई' उसका डंडा छीन लेती है और उसे आग में झोंककर साफ कह देती है- "ज़बान संभाल रे! हराम का कुछ भी नहीं, दिन-भर हाड़ तोड़ती हूँ"[9] ईंट का जवाब पत्थर से देना कोई इस औरत से सीखे। 'ऋद्धा शुक्ला' की कहानी छुटकारा का बसंतू मिसिरजब चाहे जहाँ नारी का उपभोग करने में माहिर है। लेकिन जब कमली पर झपट्टा मारा तो उसका हाथ आखिर जल जाता है। कमली निकली भला सिंह की मेहरारू । वह थाने में मुकदमा दर्ज करती है और समझौता के रूप में सीधा शादी का प्रस्ताव बसन्तु मिसिर के सामने रखती है "क्यों मिसिरजी, बिना माई-बाप की अभागिन लड़की के साथ ज़बरदस्ती करने कौन आया था? तुम्हीं न... हम नान्ह जातवालों की भी अपनी इज्जत है मालिक।.......सच्चे बड़पन के पूत हो तो इतनी हिम्मत रखो कि अपनी बिरादरी के सामने हमारा हाथ पकड़कर अपने घर में बिठा लो" आखिर 'बसंतू मिसिर' को कमली को स्वीकारना ही पड़ता है। हालांकि उस शादी को भी वह फायदे में बदलना चाहता है। दलित औरत के साथ कराई गई शादी को 'दलितोद्धार' का सफल कदम घोषित कर वह एम.एल.ए बनता है तो खुद का उपभोग सहे बिना कमली उसका घर छोड़ती है, और अपना अलग रास्ता चुनती है। ऐसा नहीं की आम नारी जीवन की कहानियों में हमेशा स्त्री चरित्र सराहनीय है। पुरुष वर्चस्विता के सामने पराजय को स्वीकारती औरतों की कहानियाँ भी है।

जाहिर है कि समकालीन कहानियों में आम औरत और पुरुष वर्चस्विता के बीच संघर्ष के कई मिसाल है। कहीं स्त्री पलटकर वार करती है तो कहीं स्वावलंबन की राह पकड़ती है। कभी वह घर छोड़ती है तो कभी चीख-चिल्लाकर

असहमति अदा करती है। कभी उम्मीद छोड़कर आत्महत्या कर लेती है। हालांकि कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं जिनमें औरत पति की मार को प्यार की निशानी समझ कर मिटने नहीं देती हैं। संजीव की 'संतुलन' कहानी की अभिनेत्री जोहरा बाई अपने पति की मार की निशानी को मुहब्बत की निशानी समझती है "मिटाउँगी क्यों (मार की निशानी को) वई मार तो हमारी मुहब्बत की निशानी है । साहब जहाँ जहाँ उसने मारा है , उन जगहों को साथ दिनों में मैं ने सत्तर बार चूमा है" [10] दरअसल अभिनय एवं हकीकत के बीच फर्क करना उसका पति नहीं जानता था। अपनी औरत को गैर के साथ देखना चाहे वह अभिनय ही क्यों न हो, उसके लिये असह्य था। इसलिये उसने जोहरा बाई को मारा था और पिछ्ले पैंतीस सालों उसकी यादों में अकेला जी रहा था। और जोहरा बाई के लिए उसकी मार की निशानी प्यार का सबूत है। इस अजब प्रेम कहानी के सामने पुरुष वर्चस्विता संदेहास्पद है। समाज में सादर जी रही है ज़ोहरा बाई। एक फिल्म अभिनेत्री की भरपूर ज़िंदगी जी रही है वह। फिर भी अपने पति की मार को प्यार की निशानी समझ बैठी है। इस पहेली का कोई समाधान स्वयं लेखक भी नहीं दे पा रहा है। शायद पुरुष वर्चस्व की जड़ें स्त्री के भीतर उतनी गाढ़ी है। कहानीकार लिखता है- "वे दाग मुहब्बत के थे ,या गुलामी के, यह रहस्य उसी तरह गढ़ा था, जैसे ज़िन्दगी और अभिनय का संतुलन।"[11]

अब्दुल बिस्मिल्लाह की 'दण्ड' कहानी की लखिया की मानसिकता भी समान है। उसका पति उस पर शक करता है, इसलिये कि वह बड़ी रूपवती है। दो बार उसकी इज्जत पर वार हो चुकी है। इसलिये पति घबराया हुआ है। उसका मन हीनता से ग्रसित है और अक्सर छोटी-छोटी गलतियों पर वह पत्नी को मारता रहता है। लेकिन वह जितना मारता है उससे ज्यादा पत्नी को चाहता भी है। लखिया भी नन्दू से उतना ही प्यार करती है - "मुझपर तुम नाहक शक करते हो । कहो तो कहीं नहीं जाऊँगी अब से। तुम जो कहो करने को तैयार हूँ .....मुझसे नफरत है तो मार डालो मुझे।"[12] सिरी उपमा जोग की तरह लखिया को भी पति परमेश्वर है। पुरुष वर्चस्विता को इस दर से देखती कहानियाँ भी समकालीन दौर में मौजूद है ।

इन कहानियों में पुरुष वर्चस्विता की चंगुल में फंसी स्त्री जीवन के कई आयाम विद्यमान है। इनमें से बहुत विरले ही कहानियों में पुरुष स्त्री के सामने एक समस्या है। सिरी उपमा जोग, बली जैसी कहानियों को छोड़कर अन्य सभी कहानियों में औरत स्वावलंबी है। पुरुष के साथ वह जी सकती है और उसके बाद भी। उसे स्वत्व बोध है। वह पुरुष मेधा समाज को पहचानती है और मानती भी है। लेकिन वह सीमा जानती है। पुरुष वर्चस्विता ने जब कभी उस परिधि को लांघने की कोशिश की, स्त्री ने समाज निर्धारित सारे कायदे कानूनों को पीछे छोड़ अपना अलग रास्ता चुनती है। यह इसलिए भी हो सकता है कि निम्न वर्गीय जीवन यथार्थ में स्त्री-पुरुष के बीच उतना अंतर नहीं है जितना वरिष्ठ समाज में होता है। जो भी हो, साहित्य में नारी जितना सजग दिखती है उतना यथार्थ जगत में नहीं है। सामाजिक एवं गार्हिक उत्पीड़न की खबरें इस तथ्य को साबित करती है। ये दोनों समांतर रेखाएँ हैं जो किसी भी मोड़ पर आपस मिल सकते हैं। फिलहाल कोशिश जारी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शिवमूर्ति,सिरी उपमा जोग, केशर-कस्तूरी, पृ.64
2. संजीव, जसी-बहू, संजीव की कथा यात्रा, पृ. 126
3. संजीव,अंतराल, संजीव की कथा यात्राः पहला पड़ाव, पृ.233
7. शैलेन्द्र श्रीवास्तव,चाल, सं. धर्मेंद्र गुप्त, नवें दशक की कथा यात्रा, पृ. 173
8. संतोष श्रीवात्सव, यहाँ सपने बिकते हैं, वसुधा-59 -60
9. नमिता सिंह, गणित, संजीव,कर्फ़्यू तथा अन्य कहानियाँ, पृ.46
10. ॠता शुक्ला, छुटकारा, सं. गिरिराज शरण, ग्राम्य जीवन की कहानियाँ, पृ. 35
11. संजीव, संतुलन, संजीव की कथा यात्रा : दूसरा पडाव, पृ.187
12. अब्दुल बिस्मिल्लाह,दण्ड,सं. गिरिराज शरण नारी उत्पीड़न की कहानियाँ, , पृ.16

सहायक आचार्य, पावनात्मा कॉलेज
मुरिक्काशेरी पी.ओ, इडुक्की-685604

यात्राविवरण

मानस कैलास

अनुवाद : प्रो. डी. तंकप्पन नायर **मूल : मंजु वेल्लायणि** **अनुवाद : डॉ.रंजीत रविशैलम**

(पूर्व प्रकाशित से आगे)

बारिश और यात्रा चलती रहीं। मौसम में आए बदलाव को देखकर कुछ लोग यात्रा रद्द करके घोडे पर षेरसोम में वापस आ रहे हैं। हाच्चु नदी के पानी का स्तर भी ऊपर हो आया है। प्रवाह भी तेज़ होने लगा है। दोनों ओर की पर्वतमाला में से बहुत तेज़ी से प्रवाहित होता पानी पैदल यात्रियों को भयभीत करते हुए मुखर के साथ नीचे गिर रहा है। रास्ते के कई भाग कीचड़ बन गए हैं। उस स्थान में कुछ ऊपर को चलकर पत्थरों के बीच में से सफ़र ज़ारी रखी। इस बीच चीनी सैनिकों की एक गाड़ी बडी मुश्किल से वहाँ से हो निकली। उसके पीछे से एक जे सी बी भी। नदी के इर्दगिर्द मिट्टी-पत्थर भरे पड़े हैं। पानी का स्तर अचानक ऊपर आने का कारण भी वही है। ऊपरी भागों से उसे नहीं हटाने पर तराइयाँ पानी के नीचे हो जाएँगी। बारिश तेज़ होने के ठीक उसी पल में चीनी सैनिक को बडे ही ध्यान से प्रतिक्रिया करनी चाहिए। नहीं तो इतने सुदूर इतनी जल्दी जे सी बी पहुँच नहीं पाती थी।

संघ के सदस्य इधर-उधर बिखरे हुए हैं। अकेला होने पर बजानेवाली सीटी स्वेटर के अंदर है। लेकिन किसी ने भी अब तक सीटी बजाई नहीं। भय एवं उत्कंठा सबको पकड़ लिए होंगे। घोड़े व याक गिलगिला होकर बिना हाव भाव के चलते जा रहे हैं। घोडेवाले व कूली लोग आसमान की विभिन्न दिशाओं में देखकर शकुन देख रहे हैं।

षाजु और बिजु ठीक सामने है। कोई भी कुछ भी नहीं बोल रहा है। उसकी ताकत नहीं है। आशंका, उत्कंठा एवं कोई अज्ञात भय पावों को कमज़ोर बनाते हैं। चल नहीं पाते। या चलते चलते नहीं चलता हो। दो कदम रखने पर थड़कन बढ़ जाता है। 41 दिन का व्रत। हर रोज़ एक सौ आठ बार पंचाक्षरी जप। यात्रा तिथि निश्चित करते ही दिन से लगातार पैदल चलना, कम मात्रा में खाना, ज़रूरी योग, फिर भी क्यों यह चंचलता। आत्मविश्वास की कमी। बाहर अति सर्दी और वर्षा। कंबल के वस्त्र पराजय कबूल रहे हैं। षाजु के छाते के नीचे खड़े हो दस्ताने हल्के-से हटाकर देखा। हथेलियाँ नीले रंग के हो चुकी हैं। थोड़ी सी चाय मिल पाती तो...। गरम पानी में हाथ-पाँव डुबाकर रख सकते तो..। यहाँ पर यदि ईश्वर प्रत्यक्ष होकर वर माँगने के लिए पूछता तो यहाँ की सर्दी हटाने के लिए विनती करता। दुर्बल चिंताओं में परेशान हुए मन को नियंत्रित रखा। यही है भक्ति, मनः धैर्य। सर्दी एवं बारिश में तितर-बितर होती ईश्वरीय आस्था बिना ढाँचे की है। मन को और प्रशोभित होना चाहिए। चिंताएँ निर्मल होनी चाहिए। ईश्वर नज़दीक है समझकर दर्शनार्थ निकल पडते हैं। विशालकाय समंदर पार करके, दण्डकारण्यों को लांघकर, आत्मपीड़ा की ज्वालामुखियों को लाँघकर चप्पल व पॉवों के घिस जाने के बाद, आँसू सूखकर, नज़ारे खत्म बाहरी दुनिया एवं बाहरी संज्ञान-आवाज़ें जल थम जाने पर भी योगी जानते थे कि ईश्वर अब और दूर पर खड़ा है।

आपने पंचाग्निमध्ये तप कर लिया। जल में शीर्षासन में खडे हो बहुत संवत्सर ध्यानमग्न हुए थे। नंगे पाँव केवल गेरुए वस्त्र पहनकर कमण्डलु के साथ इस ओर गए संन्यासीगण एवं लामा ने कैलासनाथ के दर्शन किये। कठोर सहन की राहें पार करनेवाले एवं आत्मान्वेषणार्थ निकले संचारीगण ने भी प्रकृति-निर्मित निधि से मुकुटों के दर्शन किए और लोग इसी तरह हर कदम में ईश्वर को देख पाते हैं। हर साँस-उसाँस में ईश्वर का सान्निध्य जानते हैं। प्रत्येक यात्री की परिक्रमा राह अलग है। प्रत्येक आदमी द्वारा दर्शित कैलास एवं उनके अनुभव भी विभिन्न है। आपात्काल में भी देवी के चरणयुग्म का स्मरण करने पर मन की वर्षा थम सी गई। आसमान खुल गया। रास्ते में आगे रोशनी चलती रही। हथेलियों को आपस में रगड़ा। ऊँगलियाँ रगड़ना तेज़ किया। हल्की सी गर्मी...।

एकदम आगे एक पुल के दोनों ओर पडे रेत को जे सी बी से हटा रहा है। पल भर में हाचु नदी का रफ्तार बढने लगा। षेरसोम से होकर राक्षसताल की ओर का प्रवाह।

तराई में दिखे गोर्पा व प्रार्थना पताकाएँ आह्लाद प्रदान किए। आसमान में विविध वर्ण की प्रार्थना पताकाएँ जैसे मेघ प्रत्यक्ष हुए हों। कैलास यात्रियों की गहरी प्रार्थनाओं के कारण मेघ दूर चले गए। लंबे अंतराल के बाद आसमान पुनः प्रदीप्त हुआ।

वटक्कुमनाथ मंदिर व श्रीकण्ठेश्वरम् मंदिर की परिक्रमा करने जैसी लगी। देशपुक का रास्ता है कैलासनाथ परिक्रमा की राह। कैलास के उत्तर दिशा में है नंदीपर्वत। कैलास से थोड़ा-सा हटकर नंदी की मूर्ति तैयार की हुई जैसी छोटी सी पहाड़ी। महादेव के भूतगणों में प्रमुख हैं नंदी। शिव का सबसे प्रिय वाहन। अल्पायुवाला नंदी ने शिव की तपस्या करके ही अमरत्व प्राप्त किया था। सदा ही शिव जी के सामने वंदना करती मुद्रा में बैल रूप धारी देव शिव जब आनंद नृत्य करेंगे तब मृदंगवाचन करता है - ऐसी संकल्पना भी है। नंदी का जन्म और अमरत्व श्रीपरमेश्वर पर निर्भर है। शालंकायनसुत व शिलोदनामाव के नाम से प्रसिद्ध ऋषि ने पुत्रप्राप्ति हेतु शिव की तपस्या की। शिव ने वर प्रदान कर आशीर्वाद दिया। तदनुसार यज्ञ के लिए खुदाई करने पर तीन आँखें, चार हाथों वाला जटमकुट धारी शंकर की आकृति का एक बालक प्राप्त हुआ। वही है नंदी। मित्रावरुण से स्वयं को अल्पायु पाकर बालक शिव की तपस्या कर अमरत्व प्राप्त कर रहा था।

कैलास के चारों ओर अष्ठदिशाओं में खड़े पर्वत बुद्ध धर्मावलंबियों का आराधना स्थान है। देरापुक के पास आते आते मानो ऐसा लगता है कि कैलास की वंदना कर खड़े गंधर्व या अप्सराएँ हैं ये पर्वतमालाएँ। कैलास के समीपस्थ जो भूरे रंग का पर्वत खड़ा है वह हैं तिबतवालों की आराधनामूर्ति पद्मसंभव पर्वत। माना जाता है कि बुद्धधर्मगुरु पद्मसंभव ने कैलास दर्शन एवं ध्यान यहीं पर किया था।

उत्तरी दिशा में जो पर्वत है वे सभी शिल्प चातुरी प्रकट करनेवाले हैं। अष्टदलपद्म एवं शेर का रूप सादृश्य प्रकट करते शैलाग्र। पद्मसंभव पर्वत के बाद बोधिसत्वों में प्रमुख मंजुश्री, वज्रधारा एवं अवलोकितारा जैसे नाम से तीन पर्वत।

(क्रमशः)

आत्मकथा

देवयानम्

अनुवाद : प्रो. के.एन.ओमना

मूल : डॉ.वी.एस. शर्मा

सोलहवाँ देवपद - सौहदव्याहति
(पूर्वप्रकाशित से आगे)

विभिन्न गोष्ठियों में न जाने कितने विषयों पर मैंने अपने भाषण दिए थे। कोटुंगल्लूर की किसी परिषद में श्री कुलशेखर वर्मा की कृतियों पर मैंने भाषण दिया था। तृश्शूर के चिन्मया मिशन स्कूल में भारत की दार्शनिक परंपरा को लेकर मैंने महीनों तक अपनी वक्तृता दी थी। श्री चिन्मयानंद स्वामी की जन्म शती पर उनके बारे में एक स्मृति भाषण भी मैंने दिया था।

कालटि (एरणाकुलम जिला) के श्री शंकरा कॉलेज, इंजिनीरिंग कॉलेज और स्कूल के विद्यार्थियों के लिए हर महीने "श्री शंकराचार्य : जीवनी तथा कृतियाँ" शीर्षक विषय पर मैंने अनगिनत भाषण दिए थे। एक साल तक यह कार्यक्रम चलता रहा। 'श्री शंकरा डान्स स्कूल' के दस दिन तक के संगीत की जो कार्यशाला थी उसका मैं निर्देशक था। सहज ही था कि मुझे वहाँ व्याख्यान देने की ज़रूरत पड़ी थी। तिरूर के आर्ट्स आन्ड साईन्स कॉलेज के विद्यार्थियों की सभा में मैंने रस-सिद्धांत पर भाषण दिया था।

चीफ इंजिनीयर श्री वरदराज की प्रेमपूर्ण प्रेरणा पाकर मैंने "अध्यात्मरामायणं' पर बहुत सारी वक्तृता दी थी जो कि हमारी राजधानी के अयोध्यानगर की सभा में संपन्न हुई थी। उसी प्रकार अपने मित्र श्री वी एन वेणुगोपाल ने मुझे केरल के सुप्रतिष्ठित संगीतज्ञों के बारे में कई प्रामाणिक भाषण देने का अवसर दिया था। कोयंपत्तूर (तमिलनाडु) के श्रीरामकृष्ण आश्रमों में श्री तन्मयानंद स्वामी के बारे में जितने भाषण मैंने दिए थे वे सब अब भी अच्छी तरह याद हैं।

महाराजा श्री स्वाति तिरुनाल की कृतियों पर कुछ लोगों के द्वारा यह कुतर्क उठाया गया था कि वे रचनाएँ असल में उन्हीं की नहीं हैं; किसी दूसरे की हैं। समाचार पत्रों में यह वाद-विवाद प्रकाशित हो गए थे। इस विषय पर अपना मत प्रकट करने के लिए मुझे एक उचित मौका मिला था। चेन्नै के केरल समाज के समारोह में भाषण देने के लिए मुझे बुलाया गया था। तब इन कुतर्कों का खंडन करते हुए मैंने महाराजा की कृतियों की श्रेष्ठता एवं विलक्षणता प्रमाण के साथ स्थापित की थी। डॉ वेंकिट सुब्रह्मण्य अय्यर ने भी किसी सभा में इन कुतर्कों को निराधार प्रमाणित किया था।

तिरुवनंतपुरं में कलाकारों तथा आस्वादकों के तीन प्रमुख संगठन थे। वे थे कलावेदि, दृश्यवेदि और कथकळि क्लब। मैं इन तीनों कला-संगठनों का अंग था; इसलिए बड़े संतोष के साथ इनके कामों में सक्रिय योग देता था। कथकळि के सुप्रसिद्ध आचार्य स्वर्गीय वेच्चूर रामन पिल्लै भी इनके अंग थे। उनके पुत्र श्री टि आर सुकुमारन नायर भी मेरे लिए बड़े प्रिय व्यक्ति थे।

बचपन में अपने पिताजी के पुस्तकालय से पुस्तकें लेकर पढ़ता था। अपने पिताजी को बंगला साहित्य के प्रति बड़ी रुचि थी। उनके पुस्तकालय में बहुत सी बंगला की रचनाएँ थीं। मुझे भी पिताजी के गुरु श्री पी शेषाद्रि अय्यर ने बंगला भाषा सिखाई थी। उन्होंने हमें उदात्त बंगला साहित्य के दर्शन कराए थे। उनकी कृपा से मैं बंगला साहित्य क्षेत्र के सम्मानित नाटककार श्री गिरीश चंद्रघोष के विख्यात नाटक 'विल्वमंगल ठाकुर' का मलयालम भाषा में अनुवाद प्रस्तुत कर सका। बंगला साहित्य मुझे बहुत पसंद है। जब मैं अपनी बी ए की परीक्षा में सर्वप्रथम आया तो अपने को श्री रवींद्रनाथ ठाकुर की कृतियाँ पुरस्कार में दी गई थीं। ट्रिवांड्रम हॉटेल के मालिक श्री के सी पिल्लै संस्कृत तथा बंगला के पंडित थे। वे ठाकुर जी के शिष्य थे। शांतिनिकेतन में रहकर उन्होंने बंगला साहित्य

का अध्ययन अनुसंधान किया था। हॉटेल के अपने तेरहवीं नंबर के कमरे में बैठकर एक दिन हम दोनों ने 'गीतांजलि' का मलयालम भाषा में अनुवाद करने के बारे में चर्चा की थी। गीतांजलि के गीतों को मलयालम भाषा की लिपि में रूपांतर करना और उन कविताओं का अर्थ गद्य में तैयार करना - यही हमारा लक्ष्य था। श्री के सी पिल्लै के 'शान्तिनिकेतनम' नामक घर में रहकर हम दोनों ने पुस्तक की रचना की थी। भारत की प्रांतीय भाषाओं में गीतांजली का शायद यह सर्वप्रथम अनुवाद था। 1978 को कोट्टयम के डी सी बुक्स नामक प्रकाशक ने हमारी 'गीतांजलि' का प्रकाशन किया था। उसके बाद पुस्तक के तेरह संस्करण निकले और लाखों रुपए के पुस्तक बेचे गए। इस प्रकाशक के अनुरोध पर मैंने बड़े परिश्रम से '75 तुल्लल कथाएं' (केरल की कला ओट्टन तुल्लल का साहित्य) समादृत एवं संशोधित कर दिया था। उसके पारिश्रमिक के रूप में उन्होंने मुझे केवल 2500 रुपए ही दिए थे; हालाँकि उन्हें लाखों रुपए उस पुस्तक की बिक्री से मिले थे। इस प्रकार धोखा खाने पर मेरे मन में दुख एवं निराशा अवश्य हैं, फिर भी यह सोच कर अपने मन को शांत करना चाहता हूँ कि - "आयातमायातमपेक्षणीयम्/गतं गतं सर्वमुपेक्षणीयम्/ अलं व्याथामोद नखेदनाभ्याम्/ अलंघनीया कालासनाज्ञा।।"

श्री के सी पिल्लै के साथ मेरा लगाव हमेशा अटूट रहा था। 'टागूर स्मृतियाँ' नामक उनके पुस्तक की भूमिका उन्होंने मुझसे लिखवाई। यह अपना सौभाग्य था। हम दोनों मिलकर कलकत्ता के शांति निकेतन जाना चाहते थे; वह इच्छा सफल न हो पाई। बाद में जब मैं अकेले शांतिनिकेतन गया था तब वहाँ के 'उत्तरायण' के अध्यक्ष डॉ स्वोपन मंजुदार को मैंने हमारे गीतांजलि का मलयालम अनुवाद समर्पित किया था। महाकवि की संपूर्ण रचनाओं का समग्र अध्ययन मैंने मलयालम भाषा में तैयार किया था जिसकी भूमिका श्री एम पी वीरेंद्रकुमार ने लिखी थी। पुस्तक का नाम था 'रवींद्रसरोवरं'। महाकवि के बारे में यह तो सर्वप्रथम रचना है। मलयालम भाषा में टागोर की रचनाओं के बारे में ऐसा अध्ययन इसके पहले नहीं हुआ था। श्री के सी पिल्लै ने ही मेरा हाथ पकड टागोर साहित्य के अंतराल तक ले जाकर उसकी गहराई की अनिर्वचनीय अनुभूति से परिचित कराया था। उनके सामने ज़िंदगी भर नतमस्तक हूँ मैं।

'बालरामभरतं' महाराजा कार्तिका तिरुनाल के द्वारा रचित संस्कृत ग्रंथ है। उनका यह नाट्यशास्त्र ग्रंथ आठ सौ से अधिक पन्ने का बृहद ग्रंथ था और यह अलभ्य था। राजमहल के हस्तलिखित ग्रंथों के संगहालय से इसकी मूल रचना मुझे मिली थी। मैंने मलयालम में इसकी व्याख्या तथा टीका तैयार कर 'बालरामभरतं सरस्वति' नामक ग्रंथ की रचना की थी। इतने बृहद् ग्रंथ की रचना के लिए ज़रूरी कागज़ात ट्रिवाड्रम हॉटल के किसी कमरे में मैंने रखा था। वह कमरा मैंने मात्र इस उद्देश्य से किराए पर लिया था। खेद की बात यह थी कि हॉटेल के मालिक को इससे बड़ा आर्थिक नष्ट हुआ था। इस हॉटेल में रहते हुए मैंने दूसरे एक महत्वपूर्ण ग्रंथ की भी रचना की थी और उसका नाम था 'श्री स्वातितिरुनाल : जीवनी और कृतियाँ'। हॉटेल के प्रबंधकर्ता ने मुझसे बहुत बडी उदारता प्रदर्शित की थी जिसके लिए मैं उनके प्रति सदा कृतज्ञ अवश्य हूँ। उन्हें और अधिक कष्ट न दें यह सोच कर मैंने कोई छोटा सा घर किराये पर लिया और वहाँ रहने लगा था। फिर भी भोजन के लिए ज़रूर मैं वहाँ जाता था और वहाँ के लोगों के साथ अपना जो रिश्ता था वह तो हमेशा मैंने कायम रखा था।

करीब पंद्रह साल तक ट्रिवान्ड्रम हॉटेल में रह कर मैंने बहुत कुछ काम किया था। कलात्मक और साहित्यिक क्षेत्र के कठिन परिश्रम के फलस्वरूप अपने व्यक्तित्व का उज्ज्वल विकास हुआ था और समाज के कितने महान लोगों के साथ संबंध स्थापित कर सका मैं; इसकी कोई गिनती नहीं। अपनी ज़िंदगी की गति-विगतियाँ मेरे लिए बिलकुल अनुकूल तथा शुभदायक थीं। दूर का क्षितिज मुझे प्रभापूर्ण दिखाई पड़ा था। जिन लोगों के साथ उन दिनों स्नेह संबंध स्थापित हो गया था सब के प्रति अब मैं कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। नगर के मध्य में रहकर भगवान श्री पद्मनाभ स्वामी के दर्शन का सौभाग्य भी मुझे नित्य मिला था। भगवान के दर्शन-क्रम श्री एलत्तूर स्वामी ने यों लिखा है - 'श्रीकृष्णं क्षेत्रपालं ध्वजबलि सहितं भूतनाथं नृसिंहं/ व्यासं शुभं गणेश रघुवरमानुजं जानकीवायुपुत्रं।/ विष्वक्सेनं सुपर्णं सुरमुनि कमलाभुवि ब्रह्मादिसेव्यं/ वन्दे श्रीपद्मनाभं परमपदमहोपन्नगाभोगशायिनं। (क्रमशः)

आत्मकथा

ज़िंदगी : एक लोलक

मूल : श्रीकुमारन तंपी

अनुवाद : डॉ.पी.जे.शिवकुमार

(पूर्वप्रकाशित से आगे)

"इस तरह मुझे अंधकार में डाल दिया।" उस अंधकार से प्रकाश ढूँढकर माँ के चौथे प्रसव में आया हुआ लड़का हूँ मैं। "हे दुख तुमको प्रभात वंदनं..." ऐसा गाए बिना मैं कैसे रह सकता हूँ...?

सूखने के लिए रखे सौ रुपए के नोट

लड़कियों को उनके दसवें साल की उम्र में पतियुक्ता हो जानी चाहिए, ऐसी इच्छा रखकर उस इच्छा को नियम भी बनाने वाले पुत्तूर परिवार के चाचाओं के हिसाब पहली बार भार्गवि तंकच्ची ने तोड़ दिया था। उनकी शादी पंद्रहवीं वर्ष की आयु में हुई थी। यह रिश्ता भी शुरू होने से पहले समाप्त भी हुआ। यह गाँव में फैल गया। सब जान गए।

अरमना रहस्य अंगाडिप्पाट्टु (राजमहल का रहस्य बाज़ार का गाना) की कहावत का ऐतिहासिक महत्व है। दूसरों की निंदा करते समय जिसको गाना नहीं आता, वह भी अच्छा गायक बनेगा। हर एक देशी व्यक्ति भी दूसरों की निंदा अपनी पसंदीदा राग में गायेगा। इस तरह वह सदाचार आहिस्ता आहिस्ता एत राग मालिका बन जाएगी।

भार्गवि तंकच्ची की शादी की देरी होने में चाचाजी पद्मनाभन तंपी जी के प्रगतिवादी विचार का भी प्रभाव होगा। भार्गवि तंकच्चि महान बड़ी दादी माँ की छोटी बेटी तो थी। पिताहीन पुत्री से उस माँ को विशेष वात्सल्य रहा होगा। लेकिन शादी कने के बाद प्रथम रात्रि में ही बेटी द्वारा पति का अपमान होने के कारण वह वात्सल्य घृणा में बदल गया। फिर भी कार्त्यायनि तंकच्ची की बेटी भार्गवी के साथ पुलित्तिट्टा में रहना जारी रखा। चेल्लम्मा तंकच्ची और त्रिविक्रमन तंपी एक ही पिता की संतानें हैं। उनके सौतेला बाप की पुत्री है भार्गवी। वह सत्य तेज़धार युक्त है। रिश्तों को वह सत्य घायल कर देगा। ऐसी स्थिति में उन्नीस वर्ष की उम्र बीतने पर भी परिवार में अविवाहित रहनेवाली दूसरी लडकी! समान वयस्क होते हुए भी भार्गवी की छोटी माँ रूपी भवानी अच्छे और स्नेह संपन्न लोग तंपी महोदय को देखने पर धोती का बंधन खुलाकर, सिर की पगड़ी निकालकर एक ओर शरीर झुकाकर आदर प्रकट करनेवाले मूल निवासियों को यह जानकारी दुखी बना दिया। परिवार की मुखिया पद्मनाभन तंपी और कुमारन तंपी ने परिश्रम नहीं किया, ऐसी बात नहीं है। विवाह का प्रस्ताव लेकर आनेवाले एक भी लडके को भी भवानिक्कुट्टि तंकच्ची को पसंद नहीं आता था। चात्तुतंपी का छोटा भानजा कैतोलत्तु वेलुप्पिल्ला की बेटी जननेता रूपी पद्मनाभन तंपी की बहन.... माँ की बयालीसवीं उम्र में जन्म लेने वाली बेटी। सभी के वात्सल्य पात्र बनकर पली लड़की। प्रिय भाई बीच बीच में कहा भी करता था। "माँ देख लेना... मेरी भवानी से शादी करने के लिए एक राजकुमार को लाऊँगा।"

आनेवालों में से किसी में भी भवानीक्कुट्टी तंकच्ची ने अपने राजकुमार को नहीं देखा। विषवैद्य और आभिचारी रूपी कुमारन तंपी चौंका देने वाले शब्द में भाई को कोसा : अरे अंबू, तू क्यों इस लड़की की धुन में नाचता है? तुम्हारे पिता का भानजा बचपन से ही इसका नाम नामजपन के समान कहता रहता है न... भवानी की संपत्ति के पाँच गुना संपत्ति इसको है... फिर रंग तो कुछ

कम ही है। भवानी को क्या उसकी माँ का रंग है क्या... नहीं है न? यह सुनकर फटकारती हुई दादी ने कहा - "अरे कुमारा, तू सर्पों से जो क्रूरता दिखाता है वह मेरी बेटी से मत दिखाना." "यही समस्या है। अब पुत्तूर परिवार का मुखिया मैं हूँ। दिन बीतते बीतते मेरा यहाँ कोई सम्मान नहीं रहा। छोटी माँ एक बात याद कीजिए, मैंने अपने या अपने रिश्तेदारों के एक सेन्ट भी बेचकर तबाह नहीं किया है। अंबु जानबूझकर ही इस लडकी की शादी इस तरह खसीटता जाता है। अगर उसका पति हो जाता है तो इसके संपत्ति में हस्तक्षेप करने के लिए क्या वह अनुमति देगी?

इस प्रकार अपनी ओर बरसे गए चुभनेवाले शब्दों के प्रवाह में प्रतापी पद्‌मनाभन तंपी का अभिमान डूब जाता ही रहा। वेदना सहन न कर पाने पर फूटकर रोती हुई उन्होंने मेरी दादी माँ से कहा : आगे से सही, माँ भवानी को सहमत करा देना चाहिए....। मुझे दोषी ठहराने मात्र से कुछ नहीं होगा। मैं कितने रिश्ते ले आए थे। दिवान पेष्कार का पुत्र बी एल वाला.... उनकी पारिवारिक स्थिति के अनुसार वह युवक भविष्य में जज बनेगा। इसने यह कहकर मना किया कि उसे लंबाई कम था। आगे इस तरह कुमारन भाई जैसे लोगों का दुत्कार मैं सहन नहीं कर सकता। आगे जो रिश्ता आएगा मैं कहा दूँगा। माँ को मेरा साथ देना चाहिए। साथ देना ही चाहिए।" कुंञ्जुकुटट्टी तंकच्ची में बड़े पुत्र के आँसू देखते सहने की शक्ति नहीं थी। उन्होंने निःशब्द बनकर सिर हिला दी। बेटे के कहने में भी सत्य है न? कितने ही परिवारों से रिश्ते आए। पिताहीन बच्ची समझकर ही मैंने भी कुछ ज्यादा वात्सल्य दिखाया। इस तरह आयु उन्नीस हो गई। दो पुत्र जो थे करीब बीसवीं की आयु में चल बसा। अब सबके लिए सिर्फ अंबू ही बचा है। अगर अपने को कुछ हो जाय तो लडकी की स्थिति क्या होगी? माँ ने बेटी को पास बुलाकर कहा : "देख, अंबु का कहना तूने सुन लिया न? मेरा बेटा जीवन में पहली बार इस तरह हो रहा है। तू ही उसका हेतु है। आगे तेरे संबंध में मैं वही मानूँगी जो वह कहता है। सुना तू ने? कुछ कहकर अपनी स्थिति की सफ़ाई देने का परिश्रम भवानिक्कुट्टि तंकच्ची ने जो किया, तब ऊँची आवाज़ में माँ कुंञ्जुक्कुट्टि तंकच्ची ने गर्जना की : "चुप कर अंदर जा।" पद्‌मनाभन तंपी को मूलदेश छोड़ना ही पड़ रहा था। सब कुछ दया पूर्वक दान देनेवाले हाथ अब शून्य हो गए हैं।

जिस तरह से भी हो धन कमाना चाहिए। साबित करना है कि तंपी हारा नहीं। मूल देश ने मुझे धोखा दिया। दूसरे देश में जाकर धन कमाके लौटकर, अपनी पराजय देखकर हँसनेवालों के आगे फिर से सिर उठाकर खड़ा होना है। छोटी बहन को एक अच्छे युवक के हाथों में सौंपने के बाद अगले ही दिन स्वयं यहाँ से जा सकता है।

(क्रमशः)

साहित्य का नोबेल पुरस्कार विजेता

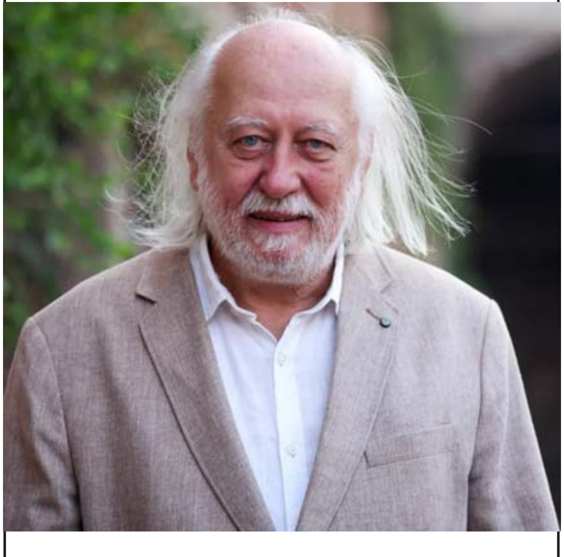

हंगेरियन उपन्यासकार

लास्जलो क्रास्जनाहोरकाई

प्रश्नोत्तरी

डॉ. रंजीत रविशैलम

1. अमिय हलाहल मद भरे, सेत स्याम रतनार - किसकी पंक्ती है?
2. 'पिंजरे की उड़ान' संकलन के रचनाकार कौन हैं?
3. 'शब्द और कर्म' किसकी आलोचनात्मक रचना है ?
4. आदिनाथ को परवर्ती संतों ने किस रूप में माना है?
5. त्रिलोचन का वास्तविक नाम क्या है?
6. नागार्जुन की कविताओं को नुक्कड़ कविता की संज्ञा किसने दी है?
7. 'चिडियाघर' किसका प्रसिद्ध उपन्यास है?
8. 'श्रीनारायणगुरु चरित' महाकाव्य के रचनाकार कौन है?
9. 'पुराना घर नए लोग' किसका निबंध संग्रह है?
10. सुमित्रानंदन पंत की प्रथम छायावादी रचना कौन-सी है?
11. 'शायद हाँ' नाटक की रचनाकार कौन है?
12. प्रकृतवादी उपन्यासों का जनक किसे माना जाता है?
13. किस रचनाकार ने बिहारी को 'पीयुषवर्षी मेघ' की उपमा दी है?
14. 'भल्ला हुआ जो मारिया' - किसकी प्रसिद्ध पंक्ति है?
15. प्रसिद्ध छत्रसाल के गुरु कौन थे?
16. 'उपदेश रसायन रास' किस भाषा का प्रथम रास काव्य है?
17. पुष्य कवि को 'भाखा की जड़' किसने माना है?
18. बगियान बसंत बसेरो कियो - किसकी पंक्ति है?
19. 'अस्वीकृत कविता' की स्थापना किसने की?
20. 'त्रिशंकु' हिंदी का आधुनिक युग में पहला, तेज, तुर्श और तल्ख नाटक है - किसने कहा?

उत्तर

1. रसलीन
2. यशपाल
3. मैनेजर पाण्डेय
4. शिव
5. वासुदेव सिंह
6. बच्चन सिंह
7. गिरिराज किशोर
8. प्रो डी तंकप्पन नायर
9. ठाकुर प्रसाद सिंह
10. उच्छवास
11. शोभा भूटानी
12. जोला
13. राधाचरण गोस्वामी
14. हेमचंद्र
15. अक्षर अनन्य
16. अपभ्रंश
17. शिवसिंह सेंगर
18. प्रेमघन
19. श्रीराम शुक्ल
20. डॉ दशरथ ओझा

सभा के अध्यक्ष, मंत्री और डॉ.मधुबाला जयचंद्रन आशीर्वाद भाषण कर रहे हैं।

अध्यापक एवं छात्र गण सभागार में।

सी.बी.एस.सी. सहोदया कलोत्सव में विजेता श्रीचित्रा पब्लिक स्कूल (सभा के आधीनस्थ) की छात्राएँ।

RNI No. 7942/1966
Date of Publication : 15-11-2025
Date of posting : 20th of Every month

KERAL JYOTI

NOVEMBER 2025

Vol. No. 62, Issue No.08
Regn. No. KL/TV(S) 381/2025-2027
Price Rs. 40/-

A monthly Publication of Kerala Hindi Prachar Sabha approved for School Libraries by the Education Dept., Govt. of Kerala as per notification No. B-3 / 4036/83 SIE dated 20-9-1985
Approved by University of Kerala as per order No. Ac. A II / 1 / 31965 / Std. Journals/2013 / dtd : 27-6-2013

सुगम हिन्दी परीक्षा पुरस्कार वितरण समारोह (एरणाकुलम जिला)
जस्टिस देवन रामचन्द्रन उद्‌घाटन कर रहे हैं।

केरल हिन्दी प्रचार सभा का प्रथम 'विशिष्ट स्त्रीशक्ति कला पुरस्कार'
जस्टिस देवन रामचन्द्रन दियामोल को प्रदान कर रहे हैं।

सुगम हिन्दी परीक्षा में ज्यादा पुरस्कार प्राप्त भवन्स विद्या मन्दिर एलमक्करा के
अध्यापक एवं विजेता छात्र-छात्राएँ।

केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम-695014 के लिए
मंत्री अ.व.डॉ.मधु बी द्वारा प्रकाशित, राष्ट्रवाणी मुद्रणालय
केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम-695014 में मुद्रित
डॉ.एम.एस.विनयचन्द्रन व डॉ.रंजीत रविशैलम द्वारा संपादित

Published by the Secretary, Adv. Dr. B. Madhu for
Kerala Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695014
Printed at Rashtravani Mudranalaya, Kerala
Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695014 & edited by
Dr.M.S.Vinayachandran and Dr.Renjith Ravisailam